मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

व्यवहारिक गिरावट

"इस देश में व्यवहारिक गिरावट अपने चरम बिन्दु तक पहुंच गयी है। धनी होने की भावना ने और कम से कम समय में अधिक से अधिक कमा लेने के शौक़ ने जुनून की शक्ल में तथा हिस्ट्रीशीरिया की हालत पैदा कर ली है और सब पर दौलत कमाने और ज़्यादा से ज़्यादा मुनाफ़ा कमाने का भूत सवार हो गया है। यह भावना देशहित के विपरीत है। यह भावना धर्म तथा व्यवहारिकता, शराफ़त व सज्जनता, नागरिकता तथा संविधान सबकी सीमाओं को लांघ गयी है। हर विभाग में भारी अव्यवस्था, हर विभाग में व्यवहारिक पतन, हर क्षेत्र में नियमों की अवहेलना जारी है तथा घूसखोरी आम हो गयी है। इन्तिहा यह है कि लोग तंग आकर अंग्रेज़ों के समय की व्यवस्था तथा सहूलतों को याद करने लगे हैं।"

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

DEC 18

₹10/-

शौक़-ए-आख़िरत

ज़मीन व आसमान में मोमिन की महबूबियत

''हज़रत अनस सहाबी से रिवायत है कि नबी करीम स०अ० ने फ़रमाया कि हर इन्सान के लिये आसमान में दो दरवाज़े हैं। एक वह जिससे इसके आमाल ऊपर चढ़ते हैं। दूसरा वह जिससे इसका रिज़्क़ नीचे उतरता है। जब बन्दा–ए–मोमिन मरता है तो वह इस पर रोते हैं। बन्दा–ए–मोमिन दुनिया में किसी अदना से अदना मरतबा व मंज़िलत का भी हो बहरहाल अपने परवरदिगार के यहां नाक़ाबिले इल्तिफ़ात नहीं रहता। और कस्मपुर्सी में नहीं पड़ा रहता। परवरदिगार का ताल्लुक़ अपने बन्दे से उसकी ज़िन्दगी भर हमा वक़्त क़ायम रहता है। एक ताल्लुक़ उसके नेक आमाल को आसमान की बुलन्दियों पर पहुचांने वाला और दूसरा उसके रिज़्क़ मक़सूम को ज़मीन तक लाने वाला और मोमिन की वफ़ात के वक़्त उन दोनों ताल्लुक़ात वाले दरवाज़े उस पर ग़म व मातम करते हैं। अल्लाह–अल्लाह किस दर्जे एहतिमाम व इकराम हर मोमिन के लिये आलमे मलकूत में भी रहता है।

अता खुरासानी से रिवायत है कि जो शख़्स ज़मीन के किसी टुकड़े पर भी सज्दा करता है वह टुकड़ा क़यामत के दिन उसके हक़ में गवाही देगा। और वह टुकड़ा उसकी मौत के दिन उस पर रोता है।

अल्लाह तआला का ताल्लुक़ अपने हर बन्दे मोमिन से कितना ज़िन्दा और जानदार होता है आज सज्दा कीजिए और कल देख लीजिए कि ज़मीन का हर–हर चप्पा जिस पर आपने कभी भी अल्लाह के लिये सर टेका है आपके हक़ में गवाह बनकर आयेगा। और इस दुनिया में भी जिस वक़्त आपसे रुकू व सुजूद की ताक़त हमेशा के लिये सल्ब कर ली जाती है वह बेहिस टुकड़ा ज़मीन का नहीं रहता बल्कि सज्दा गुज़ार मोमिन के ग़म में रोता है। क्या उज्ब कि हर सज्दा–ए–ज़मीन सज्दे को नई ज़िन्दगी बख़्शता हो। हज़रत इब्ने अब्बास रज़ि० सहाबी से रिवायत है कि ज़मीन मोमिन के मरने पर चालिस दिन तक रोती रहती है। बन्द–ए–मोमिन पर इकराम व नवाज़िश की कोई हुदूद व इन्तिहा है। ज़मीन बज़ाहिर हर तरह मुर्दा व बेजान खुश्क व जामिद, गंग व बेहिस भी मोमिन की मौत पर रंज व ग़म महसूस करती है और चालिस दिन तक इस पर रोती रहती है। हज़रत अली रज़ि० से रिवायत है कि हुज़ूर स०अ० ने फ़रमाया कि जो मौत से पहले आख़िरी कलाम फ़रमाया वह यह था कि नमाज़ की पाबन्दी करो, न माज़ का पूरा एहतिमाम करो और अपने गुलामों, ज़ेरेदस्तों के बारे में ख़ुदा से डरो।

इस हदीस से मालूम हुआ कि इस दुनिया से और उम्मत से हमेशा के लिये रुख़्सत होते हुए रसूलुल्लाह स०अ० ने अपनी उम्मत को ख़ास तौर पर दो बातों की ताकीदी नसीहत फ़रमायी थी एक यह कि नमाज़ का पूरा एहतिमाम किया जाए। इसमें ग़फ़लत और कोताही न हो। यह सबसे अहम फ़रीज़ा और बन्दों पर अल्लाह का सबसे बड़ा हक़ है। दूसरी यह कि गुलामों बांदियों के साथ बर्ताव में उस ख़ुदावन्दे जुलजलाल से डरा जाए जिसकी अदालत में हर एक की पेशी होगी। और हर मज़लूम को ज़ालिम से बदला दिलवाया जायेगा। गुलामों, ज़ेरेदस्तों के लिये यह बात कितने शर्फ़ की है कि रसूले रहमत स०अ० ने इस दुनिया से जाते वक़्त सबसे आख़िरी वसीयत अल्लाह तआला के हक़ की अदायगी और उनके साथ हुस्ने सुलूक की फ़रमायी। और इस हदीस के मुताबिक़ सबसे आख़िरी लफ़्ज़ जो आप स०अ० की ज़बान से अदा हुआ ''वत्तकुल्लाहा फ़ी मा मलकत ईमानकुम'' था। इब्ने उमर सहाबी से रिवायत है कि नबी करीम स०अ० ने फ़रमाया कि मोमिन जब मरता है तो तमाम मवाक़े क़ब्र उसके मरते ही अपनी आराइश करते हैं और कोई हिस्सा उनका ऐसा नहीं जो उसकी तमन्ना न करता हो कि वह इसमें मदफ़ून हो।

लीजिए क़ब्र के नाम से वहशत और इसके तसव्वुर से दहशत कैसी?मोमिन की वफ़ात पर तो हर क़ब्र इसकी तमन्ना ही में है कि इस मोमिन का लाशा वहीं से उठे और इसमें मदफ़ून हो। जन्नत की नौबत तो बाद में आयेगी, पहले क़ब्र ही उसके इस्तिक़बाल के लिये अपने आप को पेश करती है। जैसे किसी मुअज़्ज़ज़ मेहमान का इस्तिक़बाल किया जाता हैं और अपनी ज़ेब व ज़ीनत इसके लुभाने की ख़ातिर करती रहती है। ख़ूशक़िस्मत बन्दा–ए–मोमिन।

मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी (रह०)

بسم الله الرحمن الرحيم

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक:१२ दिसम्बर २०१८ ई० वर्ष:१०

संरक्षक

हज़रत मौलाना
सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी
(अध्यक्ष - दारे अरफ़ात)

निरीक्षक

मौ० वाज़ेह रशीद हसनी नदवी
जनरल सेकेरेट्री- दारे अरफ़ात

सम्पादक

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सम्पादकीय मण्डल

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी
अब्दुस्सुबहान नारवुदा नदवी
महमूद हसन हसनी नदवी

सह सम्पादक

मो० नफ़ीस ख़ॉ नदवी

अनुवादक

मोहम्मद सैफ़

मुद्रक

मो० हसन नदवी

इस अंक में:

एहसास–ए–ज़ियां जाता रहा.....२
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ईमान की सलामती.....३
हज़रत मौताना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह०)

अबसाब व मुसब्बब का फ़र्क़.....५
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

इशाअत–ए–इस्लाम में सहाबा–ए–किराम रज़ि० का.....७
हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी

इस्लाम का तसव्वुर–ए–हयात.....११
मौताना अब्दुल्लाह हसनी नदवी रह०

त्याग तथा समानता क्या है?.....१३
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुसलमानों पर अत्याचार कब तक.....१५
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

ज़कात के कुछ मसले.....१७
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

रहमत व शफ़क़त.....२०
मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली,यू०पी०.229001

प्रति अंक 10रू

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला ख़ॉ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण,मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल–नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

वार्षिक 100रू०

सम्पादकीय

एहसास–ए–ज़ियां जाता रहा

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुल्की सतह पर देखिये या आलमी सतह पर इस वक़्त मुसलमानों के हालात ऐसे हैं कि बेसाख़्ता यह शेर ज़बान पर आता है:

ऐ ख़ासाए ख़ासान रस्ले वक़्ते दुआ है
उम्मत पे तेरी आके अजब वक़्त पड़ा है।

ग़ैरों की करमफ़रमाइयां अपनी जगह उसके साथ अपनों की भी नादानियां अपनी जगह:

सादगी मुस्लिम की देख
औरों की अय्यारी भी देख।

एक तरफ़ "अलकुफ़्र मिल्लते वाहिदा" की हक़ीक़त आशकारा है, तो दूसरी तरफ़ हम अपने मसाएल हल करने के बजाए उनको बढ़ाने में लगे हुए हैं। (उस्वा–ए–रसूल स0अ0 जो हर ज़माने में हर मसले का हल है, उसको अपनाने के बजाए तरह–तरह के हल पेश किये जा रहे हैं) काश कि यह उम्मत उम्मते वाहिदा होती। इख़्तिलाफ़ात का होना एक तबई चीज़ है। मगर उनको इस हद तक आगे बढ़ा देना कि हुदूद क़ायम न रहें और यह ख़्याल भी न रहे कि नतीजा क्या होने वाला है। उम्मत को इसका क्या ख़मियाज़ा भुगतना पड़ेगा। ग़ैर इसका क्या फ़ायदा उठाएंगे और यह बात कहां तक पहुंच जाएगी। यह इन्तिहाई नादानी की बात है। पूरी उम्मते मुस्लिमा जिन हालात से दो–चार है उसका तक़ाज़ा क्या है? ज़रूरत तो इस बात की थी कि हर क़ीमत पर इन्तिशार से बचा जाए और इत्तिहाद क़ायम रखने के लिये अगर अपनी राय दबानी पड़े और ज़ाती कुछ नुक़सान भी उठाना पड़े तो इत्तिहाद के आगे उसकी कोई बड़ी क़ीमत नहीं थी। कम से कम दर्जा यह था कि अपने–अपने तौर पर अफ़राद भी और जमाअतें भी ख़िदमतें दीन में मसरूफ़ रहें। अगर किसी दूसरी जमाअत या अफ़राद से इत्तिफ़ाक़ न हो तो भी बजाए उसमें उलझने के मुसबत तरीक़े पर काम किया जाता रहे, अल्लाह तआला रास्ता खोलने वाला है।

आलमी सतह पर और मुल्की सतह पर देखा जाए तो काम ही कितना हो रहा है, इसमें भी अगर जगह–जगह रुकावटें पैदा की जाएंगी तो इसका नतीजा क्या होगा, हर तरफ़ सलाहियतों का ज़ियां होगा और उम्मत का शीराज़ा बिखरता चला जाएगा।

अफ़सोस की बात है कि दीन के नाम पर अहले दीन को बांटा जा रहा है। कोई राय क़ायम कर ली जाती है। चाहे राय क़ायम करने वाला कोई शख़्स हो या कोई जमाअत, उस राय को मंज़िल मिनल्लाह समझा जाता है और फिर इस पर इतना इसरार होता है कि न फिर उम्मत के इन्तिशार का ख़्याल नहीं रह जाता है।

इस वक़्त सारी दुनिया मुसलमानों के पीछे लगी है। मुसलमानों की इन्तिहाई भयानक तस्वीर लोगों के सामने पेश की जा रही है। उसके लिये मीडिया का बेझिझक इस्तेमाल किया जा रहा है और उसके लिये पूरी दुनिया एक है। दूसरी तरफ़ हम मुसलमानों का हाल यह है कि हम उनकी मदद करने में लगे हैं और बजाए इसके कि हम अपनी सही अख़लाक़ी तस्वीर दुनिया के सामने पेश करते, आपस में हम ख़ुद लड़–झगड़ रहे हैं। यह हालात बहुत ही गंभीर हैं। ज़रूरत इस बात की है कि अक़ीदे व उसूल में पूरी मज़बूती के साथ जुज़वी और फ़ुरूई मसाएल में क़द्रे तौसीअ अख़्तियार किया जाए और उम्मत के शीराज़े को बिखरने से बचाने के लिये मामूली बातों को नज़रअंदाज़ किया जाए, वरना ख़तरा इस बात का है कि जो स्पेन में हो चुका और मुसलमानों को आपस में लड़ाकर जिस तरह वहां से निकाल दिया गया, इतिहास फिर दोहराया जाए, इसका पूरा नक़्शा तैयार है, अगर हम होशियार न हुए और हमने एक होकर मज़बूत ईमान के तहफ़्फ़ुज़ की चिन्ता न की तो आगे आने वाली परिस्थितियां और कठिन हो सकती हैं।

ईमान की सलामती

हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नद्वी (रह0)

"भला जिस वक़्त याकूब अलैहिस्सलाम वफ़ात पाने लगे तो तुम उस वक़्त मौजूद थे, जब उन्होंने अपने बेटों से पूछा कि मेरे बाद तुम किसकी इबादत करोगे? तो उन्होंने कहा कि आपके माबूद और आपके बाप और दादा इब्राहीम और इस्लाईल और इस्हाक़ के माबूद की इबादत करेंगे, जो अकेला माबूद है और हम उसी के हुक्म बरदार हैं।" (सूरह बक़राः 133)

बावजूद इसके कि यह पैग़म्बरो और पैग़म्बरज़ादों का घराना था, जिसमें तौहीद और अल्लाह तआला की ख़ालिस इबादत के सिवा न कोई और तालीम थी, न अमल, न माहौल, फिर भी अक़ीदा और अमल और तौहीदे ख़ालिस की अहमियत और फ़िक्र और अपनी नस्ल के इस अक़ीदे व अमल से दायमी वाबस्तगी के ख़्याल से हज़रत याकूब अलैहिस्सलाम ने अपने बेटों, पोतों और नवासों को जमा करके पूछा कि तुम मेरे बाद किसी इबादत करोगे?

एक ज़बान से कोई लफ़्ज़ जब दूसरी ज़बान में जाता है तो बहुत और वह बहुत लम्बा सफ़र करता है तो वह सफ़र–ए–मकानी भी होता है और ज़मानी भी। यानि वह लफ़्ज़ बहुत दूर से आता है और बहुत दूर तक जाता और लोगों में पहुंचता है तो उसके मायने में कुछ फ़र्क़ आ जाता है। या मायने महदूद हो जाते हैं। पहले वह लफ़्ज़ बहुत वसीअ रक़बे पर मुहीत और ज़िन्दगी के तमाम शोबों पर हावी था लेकिन बाद में वह महदूद होकर रह जाता है। इन अल्फ़ाज़ में सब्र का लफ़्ज़ भी है जिसके साथ थोड़ी सी हक़तलफ़ी हुई लेकिन जिसने सब्र से काम लिया वह यह कि सब्र के माने यह होंगे कि अगर कुछ सदमा पड़े और कोई हादसा पेश आ जाए या कोई तकलीफ़ हो तो ज़ब्त करो। ज़्यादा रो–धो नहीं और अपनी शिकायत न करो। लेकिन अरबी में सब्र के मायने इससे कहीं ज़्यादा वसीअ हैं। सब्र के मायने हैं जम जाना, पुख्ता रहना और मुक़ाबला करना और अपनी जगह से न हटना, अपने उसूलों को न छोड़ना फिर इसके बाद अल्लाह तआला का इरशाद हैः "और एक–दूसरे को सब्र की तलक़ीन करो, सब्र का माहौल, उसकी फ़िज़ा और कैफ़ियत पैदा करो, जैसे कोई बहुत बड़ा शामियाना होता है, अगर थोड़े आदमी होंगे तो छोटा शामियाना होगा, अगर कई सौ और कई हज़ार होंगे तो बड़ा शामियाना होगा। अल्लाह तआला तलक़ीन फ़रमाता है कि सब्र का इतना बड़ा शामियाना बनाओ कि सबके सरों पर वह तना हुआ हो। फिर आख़िर में फ़रमाता हैः "अपने अक़ीदे की सरहदों पर जमे रहो, कुछ हो जाए, दुनिया बदल जाए, हुकूमतें बदल जाए, सिक्का और ज़बान बदल जाए, ताक़त बदल जाए, हम अपने अक़ीदे से जो अल्लाह के रसूल स0अ0 ने और सब पैग़म्बरों ने हमें अता फ़रमाया है उससे हम ज़रा भी इन्हिराफ़ न करेंगे और अक़ीदा–ए–तौहीद से ज़र्रा बराबर न हटेंगे कि इस दुनिया का बनाने और इसका चलाने वाला दोनों एक हैं। तख़लीक़ उसी का काम है। हकमे दुनिया और इन्तिज़ाम करना उसी का काम है। बहुत से मज़ाहिब और फ़िरक़ों का यह अक़ीदा है कि दुनिया तो अल्लाह तआला ने बनायी है लेकिन उसको बहुत सी ताक़ते चला रही हैं। कोई जिलाता है, कोई मारता है, कोई बीमार को अच्छा करता है, कोई अच्छे को बीमार। नहीं, अल्लाह तआला ने इस दुनिया को पैदा किया और वही इसका नज़्म व नस्क चलाता है।

अक़ीदे की सरहद पर बैठ जाओ और इससे हरगिज़ हटने न पाओ, चाहे कितने बड़े–बड़े इम्तिहान आज़माइश पेश आएं, मुसीबतें आएं, आंधियां आएं, ज़लज़ले आएं, बिजलियां गिरें, हम अपनी सरहद से हटने वाले नहीं हैं। कोई बड़ी से बड़ी ताक़त हमको वहां से हटाए, हम घर और बाल–बच्चों को छोड़ देंगे, अपने अक़ीदे और अपने दीन से हरगिज़ नहीं हटेंगे। यह आयत अगर हम अपने दिल पर लिख ले और हमारा ज़हन इसको कुबूल करले और अल्लाह तौफ़ीक़ दे तो हर ज़माने के लिये पूरा पैग़ाम रखती है।

यह दीन जो अल्लाह तआला ने आपको अता किया है इसके लिये जहां और चीज़ें हैं वहीं थोड़ी सी समझ और थोड़ी सी कोशिश की ज़रूरत है और अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ शर्त है। इन सबके साथ थोड़ा सा इरादा और थोड़ी सी नहीं बल्कि बहुत ज़्यादा हिम्मत चाहिये वह यह कि अल्लाह तआला की तरफ़ से हमको जो पैग़ाम मिला है उसको हम सीने से लगा लेंगे और उसको अपनी ज़िन्दगी का मसला बना लेंगे। जान जाए, चली जाए लेकिन हम अपने दीन से हटने वाले नही। इसमें पैग़मबरों के ज़रिये हमको जो नेमत अता फ़रमायी है, उसके सामने दुनिया की तमाम दौलतें और तमाम हुकूमतें गर्द हैं। इस नेमत को दांतों से पकड़ लो और आंखों में उसको बिठाओ और दिल में जगह दो जिसने इस दीन की क़द्र की तो उसने गोया

मज़बूत कड़ी को थाम लिया। हर ज़माने का और ख़ास तौर से इसके तक़ाज़े बदलते रहते हैं। ज़माने के इम्तिहानात और आस–आज़माइशें बदलती रहती हैं। उसकी तरग़ीबात, लालचें, उसकी ज़बान, उसका क़ानून हत्ता कि निज़ामे हुकूमत व सियासत में तब्दीली होती रहती है। मैं किसी एक मुल्क या किसी एक ज़माने को नहीं कहता, मेरे सामने तो पूरी तारीख़ है, कभी ऐसा भी वक़्त आता है जब अपने दीन पर क़ायम रहना मुश्किल हो जाता है। दूसरी ताक़ते उसको अपने सियासी ग़रज़ व मक़ासिद के हुसूल के लिये अपनी ताक़त में आने और अपना सिक्का चलाने और मुल्क पर हुकूमत पर करने के लिये यह कोशिश करती हैं कि मुसलमान अपने दीन से हट जाएं। उनसे मुतालिबा किया जाता है कि हमारी देवमालाई क़ुबूल कर लो और कुफ़्र व शिर्क के मुताल्लिक़ अपने रवैये में तब्दीली कर लो, लेकिन दीन का मुतालबा यह है कि जान चली जाए मगर दीन में कमी–बेशी क़ुबूल न करें। दीन की हिफ़ाज़त में अगर सैंकड़ों और हज़ारों नही लाखों जाने चली जाएं और इज़्ज़तें क़ुर्बान हो जाएं तब भी कोई परवाह नहीं कि अस्ल चीज़ जिससे क़ब्र व क़यामत में वास्ता पड़ने वाला है, वह यही दीन है, वहां तो यह पूछा जाएगा कि तुम्हारा रब कौन है?तुम्हारा दीन क्या है?और यह हुज़ूर स0अ0 कौन हैं?क़ब्र में यह काम नहीं आएगा कि आप फ़लां के बेटे हैं और एम.ए. पास हैं। किसी म्यूनिसीपलटी के या रियासत व हुकूमत के गवर्नर व हाकिम हैं। जिस तरह आप ट्रेन में बिना टिकट सवार हो जाएं और टिकट क्लेक्टर टिकट मांगे तो आप यह कहेंगे कि हमारे पास अच्छी घड़ी व अच्छा साज़ व सामान है। हम फ़लां के बेटे और फ़लां के पोते हैं, लेकिन आपके इस जवाब से कोई फ़ायदा न होगा, वहां तो टिकट का सवाल होगा, यही हाल उस तालिब इल्म का होता है जो इम्तिहान का परचा सही–सही जवाब देता है तो कामयाब हो जाता है। क़ब्र का भी यही हाल है, जहां अपना दीन और अपना ईमान काम आता है, इस दुनिया का भी यही हाल है। अल्लाह तआला यह देखता है कि यह हमारे दीन पर कितना क़ायम है और उसके लिये किसने कितनी क़ुर्बानियां दी हैं और कितनी मज़बूती और इस्तिक़लाल का सुबूत दिया है।

तो सबसे पहली मांग यह है कि सब्र व ज़ब्त से काम लो, अपने दीन पर मज़बूती से जमे रहो, दूसरों को भी थामें और जमाए रखो, और उनको सब्र की तलक़ीन व तरग़ीब दो। यह इस तरह हासिल होगा कि पहले ख़ुद दीन का इल्म हासिल कर लें और अपनी औलाद को भी दीन का इल्म दें और इसकी फ़िक्र करें कि उनका दीनी अक़ीदा ठीक है या नहीं। यह अल्लाह और उसके रसूल को पहचानते हैं या नहीं। यह नहीं कि बच्चों की तरक़्क़ी और ख़ुशहाली और दौलतमंद घरानों में उनकी शादी कर दी जाए। उसकी अल्लाह के यहां कोई क़ीमत नहीं। आपने अपने बच्चों को दीन की तालीम नहीं दी, इसलिए बुनियादी काम यह है कि अपने बच्चों की दीनी तालीम व तरबियत का एहतिमाम करें और उसकी राह में कुछ क़ुर्बानी देनी पड़े, कुछ ख़तरा मोल लेना पड़े, लेकिन हिम्मत से काम लो और अपने बच्चों, घरवालों फिर मुहल्ले वालों और उससे बढ़कर गांव वालों और आस–पास के लोगों को घूम–फिर कर दीन की तालीम दो, इसलिए तब्लीग़ी जमाअत है। उसका गश्त कराया जाता है। जो नेमत और दौलत अल्लाह तआला ने आपको अता की है और जितना दीन आप जानते हैं वह दूसरों को भी बताइये। इस वक़्त सबसे ज़्यादा ज़रूरत इस बात की है कि क़ुरआन मजीद और उर्दू पढ़े बिना बच्चों को रहने न दीजिए, चाहे लोग आपको धमकाएं और कहें कि यह क्या खायेंगे, क्या कमाएंगे, उनको आजकल की ज़बान पढ़ाइये, आजकल का कोर्स पढ़ाइये, स्कूल भेजिए, लेकिन नहीं! ख़ुदा के यहां आपका दामन होगा और उनका हाथ होगा और हमको तो डर है कि ख़ुदा का दस्ते क़ुदरत और दस्ते ग़ज़ब न हो और आपका दामन न हो कि क्या पढ़ाया था अपने बच्चों को और क्या सिखाया था उनको।

आप याद रखिये कि दीनी तालीम के बिना हिन्दुस्तान में मुसलमानों का रहना मुमकिन नहीं है। दुनिया में जो चीज़ें असर डालती हैं और उनके जो नताएज होते हैं, तालीमी ताक़त, लिसानी ताक़त, अदबी ताक़त, क़ानूनी ताक़त और हुकूमती ताक़त के असरात व नताएज हमने देखे हैं। लेकिन दीनी तालीम के बिना मिल्लते इस्लामिया, उम्मते इस्लामिया बनकर हिन्दुस्तान में नहीं रह सकती है। इसलिए हरक़ीमत पर अपने बच्चों को भूगोल पढ़ाइये, इतिहास और साहित्य पढ़ाइये, साइंस और गणित पढ़ाइये लेकिन पहली और बुनियादी शर्त यह है कि उसके साथ–साथ दीन की भी तालीम दीजिए। मस्जिद–मस्दिज और घर–घर उसका इन्तिज़ाम होना चाहिये। उसकी तालीम को खूब चलाइये, अगर दीन की तालीम को आप भुलाइयेगा नहीं, उसको दबाकर बक्स में बंद करके रखियेगा तो फिर उसके लिये ख़तरा पैदा हो जाएगा कि कहीं कोई डाकू आकर डाका न डाल दे। लेकिन अगर आपने अपने पास के माहौल को सही रखा, ...(शेष पेज 16 पर)

असबाब व मुसब्बब का फ़र्क़

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद राबे हसनी नदवी

कभी–कभी अल्लाह तआला की हिकमत से दुनिया में ऐसे वाक़्यात पेश आते हैं, जो इस बात की अलामत होते हैं कि अल्लाह तआला ही सबकुछ कर रहा है। देखने में जो कुछ भी बात हो लेकिन हक़ीक़त में अल्लाह तबारक व तआला ही सबकुछ कर रहा है। इसकी एक छोटी सी मिसाल यह है कि आप चम्मच से कोई चीज़ खाते हैं, अगर आपका हाथ न दिखे और सिर्फ़ चम्मच दिखाई दे तो सब देखने वाले समझेंगे कि चम्मतच खिला रहा है। इसी तरह दुनिया में जो कुछ होता है, यह सब अल्लाह के पहले से बनाए हुए निज़ाम के मुताबिक़ होता है। फिर इसमें कभी–कभी अल्लाह तआला बदलाव करता है, इसलिए कि हर चीज़ अल्लाह की मंशा और उसकी मर्ज़ी की मातहत है। किसी भी चीज़ का बाहर से उसूल नहीं बनाया गया। जैसेः कोई मदरसा है या इदारा है तो उसकी जो ज़िम्मेदार कमेटी है वह उस मदरसा का निज़ाम बनाएगी, वहां की तालीम कैसी होगी, कितने घंटे होंगे, हाज़िरी कितने बजे होगी, सब लोग उसी के मुताबिक़ अमल करेंगे। लिहाज़ा देखने में यह नहीं लगेगा कि इस मदरसे से जुड़े लोग जो काम कर रहे हैं, यह खुद कर रहे हैं या किसी के पाबन्द हैं, लेकिन हक़ीक़त यह है कि वह ऊपर से पाबन्द हैं और ज़ाहिर है अगर वह उस पर अमल नहीं करेंगे तो उनकी नौकरी ख़तरे में आ जाएगी। लेकिन देखने में ऐसा नहीं मालूम हो रहा है। देखने में यही लग रहा है कि यह लोग अपनेआप बहुत पाबन्दी से काम कर रहे हैं।

ज़ाहिरी आंख से देखा जाए तो दुनिया में जो कुछ हो रहा है, उसके देखने से यही लगता है कि यह सब अपनेआप हो रहा है और दुनियावी असबाब के बिना पर हो रहा है और ज़ाहिर भी ऐसा होता है। जैसेः आप किसी को चोट मारिये तो उसे चोट लगेगी, और कहा जाएगा कि उन्होंने मारा है इसलिए चोट लगी है। लेकिन मारा क्यों है, किसके कहने से मारा है और किसके हुक्म की तामील की है?अगर यह नहीं मालूम है तो आदमी समझेगा कि खुद उन्होंने मारा है लेकिन बहुत मुमकिन है कि उसने खुद न मारा हो बल्कि अपने आक़ा के हुक्म पर मारा हो। अब अगर उसको आप यह समझेंगे कि यह मारने वाला खुद ही से मार रहा है तो आपको उसके ख़िलाफ़ गुस्सा होगा, और अगर यह समझेंगे कि उस शख़्स ने किसी के हुक्म पर मारा है तो उस शख़्स पर गुस्सा आयेगा। या कोई शख़्स किसी को हदिया दे रहा है और वह किसी के कहने से हदिया दे रहा है या किसी शख़्स ने उसको दिया है कि उस तक पहुंचा दो, तो लेने वाला यह समझेगा कि यह हम ही को हदिया दे रहे हैं और उसका एहसानमन्द होगा, लेकिन उसको मालूम हो जाए कि यह खुद नहीं दे रहा है, बल्कि उससे कहा गया है कि फ़लां को हदिया दे देना, या उसको दिया गया है कि फ़लां को पहुंचा देना, तो फिर उस शख़्स का शुक्रगुज़ार होने की ज़रूरत नहीं है।

दुनिया का निज़ाम इसी तरह चलता है। हर चीज़ अल्लाह के करने से होती है। अलबत्ता अल्लाह तआला ने बीच में ज़राए ज़ाहिर कर दिये हैं और हम उन्हीं को देखते हैं लेकिन उनके चलाने वाले को नहीं देखते हैं। इसलिए हम यही समझ बैठते हैं कि सारा काम यह ज़राए ही कर रहे हैं। यानि ज़राए को अस्ल समझने लगते हैं। हालांकि यह सब अल्लाह तआला का बनाया हुआ है। लेकिन अल्लाह ने इसलिए छिपा कर रखा है कि दुनिया में इन्सान का इम्तिहान हो। अगर यह मालूम हो जाए कि हर चीज़ अल्लाह कर रहा है और वह उस बात को समझ ले तो फिर नाफ़रमानी नहीं कर सकता। अगर हम देख लें और यक़ीन कर लें तो यक़ीनन नाफ़रमानी नहीं कर सकते। इसलिए कि यह हक़ीक़त है कि कोई आदमी खुद से आग में नहीं घुसेगा, क्योंकि उसको यह मालूम है कि आग जला देगी और इल्म अस्ल है। अल्लाह तआला ने दुनिया में इस इल्म को छिपाकर रखा है और इसलिए छिपाकर रखा है ताकि सिर्फ़ नबी के कहने से आप बात को मान लें और समझ जाएं कि यह यक़ीनी बात है। जब तक नबी पर यक़ीन नहीं होगा, नबी के सच्चे होने का, उनकी बात के सच्चा होने का, उन्होंने जो कह दिया है कि आख़िरत में हिसाब–किताब होगा, अब आप आख़िरत में हिसाब–किताब के लिये तैयार हो जाएं। अब आपको ऐसा अमल करना पड़ेगा कि आपका हिसाब–किताब सही हो। अगर आपका अमल सही नहीं है तो वहां नुक़सान उठाना पड़ेगा। कुरआन मजीद में साफ़–साफ़ यह कह दिया गया है कि एक ज़र्रा बराबर नेकी करोगे तो वहां मिलेगी, और एक ज़र्रा बराबर गुनाह करोगे तो वहां मिलेगा। ज़ाहिर है अगर इन्सान को यक़ीन आ जाए तो वह कभी गुनाह नहीं करेगा, लेकिन चूंकि

आदमी को यक़ीन नहीं है और अल्लाह यही देखना चाहता है कि हम तुम्हें नबी के ज़रिये से बताते हैं कि इस रास्ते पर चलो, अब तुम चलते हो या नहीं, मतलब यह है कि हमें यह देखना है कि तुम्हारे दिमाग़ में दुनिया घुसी है और दुनिया के ज़राए घुसे हैं। तुम उनसे निकलना चाहते हो या नहीं। अगर हमारी उंगली पर कोई चाकू रख दे, तो यक़ीन हो जाएगा कि यह चला देगा तो उंगली कट जाएगी, लेकिन अगर कोई सिर्फ़ इतना कहता है कि हम तुम्हारी उंगली चाकू से काट देंगें तो आपको जल्दी यक़ीन नहीं आयेगा और अगर चाकू उंगली पर रख दिया है तो फ़ौरन यक़ीन आ जाएगा। इसी तरह इन्सान के अन्दर जब तक यक़ीन पैदा नहीं होता जिसको ईमान कहते हैं, उस वक़्त तक आदमी अल्लाह तआला की फ़रमाबरदारी कैसे करेगा और इसीलिए अल्लाह तआला ने दुनिया को ज़ीनत का सामान बनाया है ताकि वह इन्सान को आज़माए, इरशाद है: "ज़मीन पर जो भी है उसको हमने इसलिए ज़ीनत बना दिया है कि ताकि हम जांच लें कि उनमें कौन बेहतर से बेहतर अमल करने वाला है।" (कहफ़: 7)

दुनियावी ज़ेबाइश व आराइश का मक़सद यह है कि हम देखें कौन शख़्स अच्छा अमल करता है, दुनियावी चमक–दमक की मौजूदगी में, जबकि एक तरफ़ लज़्ज़तें, राहतें, मनफ़अतें, ख़्वाहिशें हैं और दूसरी तरफ़ अल्लाह का एक हुक्म है। ऐसी सूरत में तुम अल्लाह का हुक्म मानते हो या अपनी लज़्ज़तों और राहतों में फंसे हो, अल्लाह तआला यही देखना चाहता है। इसीलिए अल्लाह तआला ने अपने नबी भेजे। एक नबी तमाम इन्सानों को यह समझाता है कि देखो अल्लाह के मामले को मज़ाक़ न समझो, तफ़रीह न समझो, यह एक हक़ीक़त है, अगर तुम इस हक़ीक़त को तस्लीम नहीं करोगे तो तुम्हें इसका ख़मियाज़ा भुगतना पड़ेगा। आज तुम अल्लाह के अलावा दूसरों को समझ रहे हो कि वह तुम्हारा काम कर सकते हैं। वाक़्या यह है कि वह कुछ भी नहीं कर सकते और फिर क्या तुम इतने बेवकूफ़ हो कि पत्थर की एक मूर्ति को यह समझते हो कि वह तुम्हें नफ़ा व नुक़सान पहुंचाएगी। याद रखो अस्ल मालिक अल्लाह है। अल्लाह तआला ही की ज़ात है जिसने सबको पैदा किया है, जिसने सारी नेमतें दीं, जिसने ज़िन्दगी दी, और ज़िन्दगी के अन्दर जितने तक़ाज़ें हैं उनके लिये सामान मुहैया किया। गोया सबकुछ अल्लाह का किया हुआ है। और फिर अल्लाह बराहरास्त इस पर निगरां है कि दुनिया में सबकुछ सही हो रहा है या नहीं?वाक़्या यह है कि जब इन्सान को यह यक़ीन हो जाए कि सब कुछ अल्लाह करता है तो अल्लाह की नाफ़रमानी क्यों करेगा। दुनियावी निज़ाम के मातहत हम पुलिस से डरते हैं, सरकारी अफ़सरों से डरते हैं, इसलिए कि हम जानते हैं कि वह जो करना चाहे कर देगा, लिहाज़ा पुलिस अफ़सर की नाफ़रमानी कैसे करें, हम मजिस्ट्रेट और डीएम के हुक्म की नाफ़रमानी नहीं कर सकते, क्योंकि हम जानते हैं कि वह हमारी कोई परवाह नहीं करेगा।

अल्लाह तआला अपने जिन नेक बन्दों के अमल को अच्छा देखता है, कभी–कभी उनकी ख़ातिर दुनिया के निज़ाम में बदलाव भी कर देता है इसलिए कि अल्लाह को पसंद आता है कि उसके नेक बन्दों को तकलीफ़ न हो लिहाज़ा उस तकलीफ़ को बदल देता है। सूरह कहफ़ में कुछ लोगों का वाक़्या इसीलिए बताया गया है और यह बताया गया है कि इस बात को अच्छी तरह समझ लो कि सबकुछ अल्लाह करता है और बन्दों पर अल्लाह को राज़ी करना ज़रूरी है। वरना उन्हें आख़िरत में भुगतना पड़ेगा और कुरआन मजीद में फ़रमा दिया गया है कि आख़िरत में न किसी की सिफ़ारिश चलेगी, न ख़रीद फ़रोख़्त, फिर इन्सान कैसे अपने अज़ाब को रोकेगा। वहां कोई बदलाव भी संभव नहीं है। वहां हम कुछ नहीं कर सकते हैं। यह ज़िन्दगी हमको इसीलिए दी गयी है कि हम अच्छे काम करके दिखाएं ताकि वहां जन्नत व आराम के मुस्तहिक़ हों और अगर हम अच्छे काम करके नहीं दिखाएंगे तो याद रहे कि वहां हमें कुछ नहीं मिलेगा।

अल्लाह तआला ने आख़िरत की ज़िन्दगी की ज़मीन, दुनियावी ज़िन्दगी वाली ज़मीन की तरह नहीं बनायी है। यहां की ज़मीन में अल्लाह तआला ने वह सारी चीज़ें रख दी हैं, जिनकी इन्सान को ज़रूरत होती है, इस दुनिया का निज़ाम यह है कि अगर इन्सान मेहनत करे, कोशिश करे तो ग़ल्ला पैदा कर ले, और बाग़ लगा ले तो फ़ल हासिल कर ले, लेकिन आख़िरत की ज़मीन ऐसी नहीं होगी, वहां की ज़मीन खोखली होगी, वहां की ज़मीन में कुछ पैदा नहीं होगा, न वहां कोई दरख़्त होगा, न कहीं साया होगा, न ज़मीन में इसकी सलाहियत होगी कि इसमें आप कुछ पैदा कर लें। वहां की ज़मीन में कुछ पैदा करने के लिये ज़रूरत है कि इस ज़िन्दगी में हम ऐसे काम करें जिनसे हमारे लिये अच्छी से अच्छी व्यवस्था हो सके।

इशाअत–ए–इस्लाम में सहाबा–ए–किराम रज़ि0 का किरदार

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद वाज़ेह रशीद हसनी नदवी

कहावत मशहूर है कि ''पेड़ अपने फल से पहचाना जाता है'' इसीलिए जो पेड़ जितना घना होगा, ऊंची टहनियों और गहरी जड़ों वाला होगा, उसके साये में बैठने वाला उससे उतना ही ज़्यादा लाभान्वित होगा। यद्यपि साया वक़्ती और आरज़ी होता है, लेकिन उसका उम्दा और ज़ायक़ादार फल हर एक की ज़ियाफ़त–ए–तबअ का सामान होता है। कुरआन मजीद में ऐसे ही उम्दा सिफ़ात वाले दरख़्त से ''कलिमा तैय्यबा'' की मिसाल दी गयी है:

''क्या आपने नहीं देखा कि अल्लाह ने अच्छी बात की मिसाल एक अच्छे पेड़ से दी जिसकी जड़ मज़बूत है और जिसकी शाखें आसमान से बातें करती हैं, अपने रब के हुक्म से वह हर वक़्त फल देता रहता है और अल्लाह लोगों के लिये मिसालें बयान करता है कि शायद वह नसीहत पकड़ें, और बुरी बात की मिसाल बुरे पेड़ जैसी है जिसको ज़मीन के ऊपर ही से उखाड़ लिया गया हो, वह ज़रा भी अपनी जगह खड़ा नहीं रह सकता, और अल्लाह ईमान वालों को मज़बूत बात से इस दुनिया में भी मज़बूत करता है और आख़िरत में भी, और अल्लाह ज़ालिमों को गुमराह करता है और अल्लाह जो चाहता है करता है।''

जिस तरह एक पेड़ अपने फल और खेती अपनी पैदावार से पहचानी जाती है, उसी तरह एक उस्ताद अपने शार्गिदों से पहचाना जाता है। तराजिम व तबक़ात की किताबों में जिन अज़ीम शख़्सियात के तज़किरे मौजूद हैं, उनके शार्गिदों की ज़िन्दगियों के ताबन्दा व ताबां इल्मी नुकूश भी तारीख़ की एक सुनहरी कड़ी है, इसी तरह एहसान व सुलूक की राह तय करने वालों की क़ाबिले क़द्र कोशिशों का तज़किरा भी तारीख़ का एक रोशन बाब है। जिनके रूहानी फ़ुयूज़ व असरात आइन्दा नस्लों तक मुन्तक़िल हुए। ताहम इन सब बातों का बुनियादी महवर उस्तादे मुरब्बी की सलाह व सलाहियत और उसकी इल्मी इस्तअदाद है, और शार्गिदों और मुरीदीन के दरमियान इसकी ग़ैर मामूली मक़बूलियत व मुहब्बत है।

नबी–ए–अकरम स0अ0 का इरशाद है: ''मुझे मेरे रब ने अदब सिखाया और बेहतरीन अदब सिखाया।'' हज़रत आयशा रज़ि0 फ़रमाती हैं: आपके अख़लाक़ कुरआन के ऐन मुताबिक़ थे'' नीज़ कुरआन मजीद में नबी–ए–अकरम स0अ0 के मुअल्लिम व मुज़क्की होने की सिफ़त का तज़किरा यूं है:

''वही ज़ात है जिसने अनपढ़ लोगों में उन्हीं में से एक रसूल भेजा जो उनके सामने उसकी आयतें पढ़कर सुनाता है और उनका तज़किया करता है और उनको किताब व हिकमत सिखाता है जबकि वह उससे पहले खुली गुमराही में पड़े हुए थे।''

इसका नतीजा यह हुआ कि सहाबा–ए–किराम रज़ि0 ने नबी करीम स0अ0 के ज़ेरे साया ऐसी ग़ैर मामूली तरबियत पायी कि वह आप स0अ0 के मुसन्ना बन गये, चूंकि आप स0अ0 के नबवी मिशन में सरे फ़ेहरिस्त ''राहे हक़ की दावत'' थी जिसके बारे में कुरआन का हुक्म था:

''ऐ रसूल जो आप पर उतरा है उसे आप पहुंचा दीजिए और अगर आपने ऐसा न किया तो उसका पैग़ाम आपने न पहुंचाया और अल्लाह लोगों से आपकी हिफ़ाज़त पहुंचायेगा बेशक अल्लाह इनकार करने वाले लोगों को रास्ता नहीं देता।'' लिहाज़ा नबी अकरम स0अ0 ने अपने असहाब को मुश्रिकीन की ईज़ा रसानियों पर उफू व दरगुज़र और मक्की दौर में आज़माइशों पर खरा उतरने और सब्र से काम लेने की हिदायत की, ज़बाने नुबूव्वत ने इन्तिहाई जुदा गीं उस्लूब में इस दौर की अक्कासी की है। इरशाद है: अल्लाह के रास्ते में जितना मुझे डराया गया उतना किसी को नहीं डराया गया और राहे खुदा में जितना मुझे सताया गया उतना किसी को नहीं सताया गया। वाक़्या यह है कि मुझपर तीस दिन और तीस रातें मुसलसल इस हाल में गुज़री कि मेरे और बिलाल के लिये खाने की कोई ऐसी चीज़ नहीं थी जो किसी जानदार की ग़िज़ा बन सके सिवाए

इतनी क़लील मिक़दार के जिसे बिलाल बग़ल में छिपा लेते।''

चुनान्चे जो शख़्स भी हल्का बगोश इस्लाम होता और आप स0अ0 की सोहबत का शर्फ़ उठाता उसकी हैसियत एक दायी की होती जो राहे ख़ुदा में हर क़िस्म की मुसीबत बर्दाश्त करने पर आमादा रहता। सहाबा–ए–किराम के तज़किरे मुहब्बत और जांनिसारी और राहे दावत में क़ुर्बानियों के वाक़्यात के हक़ीक़ी आइनादार हैं जिनके मुताले से बसा अवक़ात इन्सान हैरत व ताज्जुब में पड़ जाता है कि नबी करीम स0अ0 की नज़रे करम नवाज़ के बाद एक मामूली इन्सान की भी कैसी काया पलट हो जाती थी। और लम्हा भर में वह ख़ुदा के लिये जान देने और मर मिटने को किस तरह आमादा हो जाता था और हर मुसीबत के मुक़ाबिल सरापा पैकरे सब्र साबित होता था। वाक्या यह है कि सहाबा किराम ने ऐसी ग़ैर मामूली मुसीबतें बर्दाश्त की हैं जिनके सामने मज़बूत पहाड़ भी हिल जाएं। उन्होंने राहे ख़ुदा में जानी व माली हर तरह की क़ुर्बानियां पेश की और मक़दूर भर अनथक कोशिशें भी की हैं।

इस्लाम और पैग़म्बरे इस्लाम स0अ0 तक रसाई का हर रास्ता ख़तरात से पुर और कांटो से घिरा हुआ था। अशराफ़े क़ुरैश की ईज़ा रसानियां अपने उरूज पर थीं और जोयाने हक़ के लिये अपनी जान जोखिम में डालकर उन्हें रास्तों से गुज़रना नागुज़ीर था। हज़रत अबूज़र गिफ़ारी रज़ि0 का वाक़्या इसकी एक खुली हुई मिसाल है। जब वह नबी करीम स0अ0 की ज़ियारत की ग़रज़ से और हल्क़ा–ए–इस्लाम में दाख़िल होने की नियत से मक्का–ए–मुकर्रमा तशरीफ़ लाये थे।

नबी करीम स0अ0 की सोहबते कीमिया असर में जो हस्तियां परवान चढ़ीं उन्होंने आप स0अ0 ने इल्म व हिकमत और तज़किया व एहसान की तालीम हासिल की और चूंकि इफ़ादा और इस्तफ़ादा की अस्ल बुनियाद मुअल्लिम और मुरब्बी के गहरे ताल्लुक़ और बेतकल्लुफ़ी पर होती है। इसलिए हम देखते हैं कि आप स0अ0 के असहाब का ताल्लुक़ आप स0अ0 से इस क़द्र गहरा और मज़बूत था कि उसकी मिसाल मिलना मुश्किल है।

सहाबा किराम का नबी करीम स0अ0 से ताल्लुक़ ऐसा जांनिसाराना और फ़िदाइयाना था कि वह आप स0अ0 के हर हर अमल की तक़लीद अपने लिये बाइसे शर्फ़ समझते थे। सीरत व सवानह की किताबों में ऐसे बेशुमार वाक़्यात मिलते हैं जिनसे अंदाज़ा होता है कि सहाबा किराम का नबी स0अ0 से ग़ैर मामूली ताल्लुक़ था। और वह नबवी फ़ुयूज़ के हुसूल पर कैसे हरीस रहते थे और अपनी इन्फ़िरादी व इज्तिमाई ज़िन्दगी में आप स0अ0 की हर हर अदा की तक़लीद को कितनी अहमियत देते थे और दीनी व दुनियावी तमाम मामलात में आप स0अ0 की एक एक रहनुमाई के कैसे मोहताज रहते थे। इसी का नतीजा था कि वह बिल्कुल आप स0अ0 ही के रंग में रंग गये थे। वाक़्या यह है कि इस ग़ैर मामूली रब्त व ताल्लुक़ की मिसाल दुनिया के किसी लीडर और कमांडर के तज़किरे में मिलना तो दरकिनार, साबिक़ा अम्बिया के तज़किरे में भी सिवाए चंन्द इस्तस्नाई वाक़्यात के मिलना मुश्किल है।

नबी करीम स0अ0 ने अपने सहाबा की मिसाल सितारों से दी हैं। इरशाद हैः ''मेरे सहाबा सितारों की मानिन्द हैं, इनमें से तुम जिसकी इत्तेबा कर लोगे, राहेयाब हो जाओगे।'' ज़ाहिर है सितारे अपनी रोशनी के एतबार से अलग–अलग हैं पर सिरिया और ज़हरा भी इन सितारों में शुमार हैं और आम चांद तारे भी इसी फेहरिस्त में एक हैं लेकिन इन सबकी मुश्तरक सिफ़त यह है कि वह रोशनी फैलाते हैं और तारीकी दूर करते हैं और लोग उनके ज़रिये रास्ते तलाश करते हैं।

एक सही हदीस में यूं इरशाद है ''तुम पर मेरी पैरवी लाज़िम है और हिदायत या फ़तेह खुल्फ़ाए राशिदीन की तुम इसको मज़बूती से पकड़ लो और दांतों तले दबा लो।''

सही बुख़ारी में हज़रत अनस बिन मालिक रज़ि0 की मरफ़ूअ रिवायत है, ''अंसार से मुहब्बत ईमान की अलामत है।''

इसी तरह एक मौक़े पर जब आप स0अ0 से नजात पाने वाली जमाअत के मुताल्लिक़ सवाल किया गया तो आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः ''जिस पर मैं और मेरे सहाबा हों।''

वाक़्या यह है कि सहाबा–ए–किराम रज़ि0 ने अपने नबी स0अ0 के इस ग़ैर मामूली एतमाद पर सौ फ़ीसद खरा उतर कर दिखा दिया और हर मारका और आज़माइश के मौक़े पर मुहाजिरीन व अंसार में तमाम सहाबा ने अपने ज़ाति जौहर खोल कर रख दिये और कभी भी कोई सहाबी मारकों में शामिल रहने से पीछे नहीं हटा। इसका नतीजा था कि जब ग़ज़्वा–ए–तुबूक में तीन

सहाबी किसी उज्र की वजह से पीछे रह गये तो उनका यह अमल उनके लिये बड़ी आज़माइश का ज़रिया बन गया। हज़रत काब बिन मालिक रज़ि0 की आज़माइश का मशहूर क़िस्सा उनकी वफ़ादारी का ग़ैर मामूली वाक़्या है। उस ज़माने में वह नदामत और पशेमानी के किस आलम से दो चार नहीं हुए लेकिन ऐसे हालात में भी जिस वक़्त उनको ग़िसानी बादशाह का ख़त मिला और उसमें बादशाह से जा मिलने का पैग़ाम पढ़ा तो उन्होंने बिला किसी ताम्मुल के उस ख़त को तंदूर में फेंक दिया। बिला शुब्हा हज़रत काब बिन मालिक का यह अक़्दाम उनकी वफ़ादारी और उनकी साबित क़दमी और मुहब्बते रसूल का खुला मंज़र है।

इन्सानी तारीख़ में "नबवी मदरसा" तालीम व तरबियत के लिहाज़ से सबसे बड़ा मदरसा रहा है और हो भी क्यों न जिस मदरसे में तालीम के फ़राइज़ मुअल्लिमे इन्सानियत स0अ0 के ज़िम्मे हो और उसमें पढ़ने वाले वह दआत और रब्बानी उलमा हों जिन्होंने रब्बुल आलमीन के हुक्म से अपनी नबी के ज़ेरे साया बेमिसाल और ग़ैर मामूली तरबियत हासिल की और फिर दुनियाए इन्सानियत से गुलामी का तौक़ उतारा और तारीकियों से लाज़वाल रोशनी अता की।

अल्लाह तआला ने नबी स0अ0 को तौफ़ीक दी कि वह सहाबा की ऐसी मिसाली जमात तैयार करें जो जाहिलियत की ग़लाज़तों से निकल कर नूरे ईमान की तरफ़ मुन्तक़िल हों और फिर वह तारीख़ इन्सानी के अज़ीम तरीन मशाहीरे आलम में शुमार हैं और दुनिया उन्हें तारीख़ साज़ की हैसियत से तस्लीम करे। चुनान्चें उन्होंने दावत के ऐसे ग़ैरमामूली फ़राएज़ अंजाम दिये और दुनिया के सामने ऐसे नमूने पेश किये जिनकी मिसाल मिलना मुश्किल है।

इसमें कोई कलाम नहीं कि मदरसा नुबूव्वत के फ़ारिग़ीन दुनिया की अज़ीम तरीन हस्तियां हैं। यह वह सुतून हैं जो बाद के ज़माने के लिये दावत, जिहाद, हुकूमत और तहज़ीब व तमद्दुन असास हैं। लिहाज़ा हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ रज़ि0, हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि0, हज़रत उस्मान ग़नी रज़ि0, हज़रत अली मुर्तुज़ा रज़ि0 हज़रत साद बिन वक़्क़ास रज़ि0, हज़रत अमीर मुआविया रज़ि0, तमाम सहाबा का जो मक़ाम और उनकी सीरत है उसकी नज़ीर पेश नहीं की जा सकती। इसका बुनियादी राज़ यह है कि नबी स0अ0 ने ऐसे जिगरपारों को तरबियत दी जिन्होंने इल्मे तौहीद बुलन्द किया और जिहाद व दावत के फ़राइज़ अंजाम देने में कोई कसर न छोड़ी और देखते–देखते पूरा जज़ीरतुल अरब उनके ज़ेरे नगीं हो गया और निस्फ़ सदी ही में फुतूहात का वास्ता दायरा यूरोप तक फैलता चला गया था। मराकिश के आख़िरी साहिली हुदूद तक सन् 65 हिजरी में हज़रत उक़्बह बिन नाफ़ेअ की आमद इसी सिलसिले की एक कड़ी है।

दुनिया की तमाम यूनिवर्सिटीज़, कालिजेज़ और मदारिस से ज़्यादा दर्सगाहे नुबूव्वत की कामयाबी की एक बुनियादी वजह यह भी है कि आप स0अ0 ने उसमें ऐसी जमाअत को दाख़िला दिया जो इन्तिहाई सआदतमंद और नस्ले इन्सानी के इन्तिहाई लोग थे। आप स0अ0 उस दर्सगाह में अपने सहाबा को तवक्कुल इलल्लाह की तालीम देते थे। अज़ीमत और इस्तक़ामत के अमली दर्स देते थे और हमा वक़्त उनकी तरबियत और तज़किया व एहसान पर तवज्जो मरकूज़ रखते थे। इस तरबियत का नतीजा था कि उनके अज़ाएम को जिला हासिल होती थी। हिम्मते बुलन्द होती थी और दर्सगाहे नुबूव्वत के यह फ़ारिग़ीन खरे व निखरे सोने की तरह होते थे जिनके दिलों में क़ुर्बानी और जांनिसारी का ग़ैर मामूली जज़्बा मोजज़न होता था। मुफ़क्किरे इस्लाम हज़रत मौलाना अबुल हसन अली नदवी रह0 की ज़बानीः "यह नवज़ाएदा जमाअत जो मुजाहिरीने मक्का और अंसारे मदीना पर मुश्तमिल थी एक अज़ीमुश्शान इसलामी उम्मत की असास और इस्लाम का सरमाया थी। इस जमाअत का ज़हूर ऐसी कठिन घड़ी में हुआ जबकि दुनिया मौत व ज़िन्दगी की कशमकश में मुब्तिला थी। इस जमाअत ने आकर उसकी ज़िन्दगी का पलड़ा झुका दिया और उन तमाम ख़तरात को दूर कर दिया जो उसको दरपेश थे। इस जमाअत का ज़हूर फिर उसका इस्तहकाम इन्सानियत की बक़ा के लिये ज़रूरी था। इसीलिए जब अल्लाह तआला ने अंसारी मुजाहिरीन की अख़वत व मुहब्बत पर ज़ोर दिया तो फ़रमायाः अगर ऐसा न करोगे तो ज़मीन में बड़ा फ़ित्ना व फ़साद बरपा होगा।"

उधर रसूलुल्लाह स0अ0 की रहनुमाई में सहाबा किराम की ईमानी तरबियत व तकमील कासिलसिला जारी रहा। कुरआन बराबर उनके दिलों को ताक़त और गर्मी बख़्शता रहा। रसूलुल्लाह स0अ0 की मजालिस से उनको इस्तहकाम, ख़्वाहिशाते नफ़्स पर क़ाबू

रज़ा–ए–इलाही की सच्ची तलब और उसकी राह में अपने को मिटा देने की आदत, जन्नत से इश्क, इल्म की हिस्र, दीन की समझ, और एहतिसाबे नफ़्स की दौलत हासिल हुई। वह लोग चुस्ती व सुस्ती में रसूल स0अ0 की इताअत करते। जिस हाल में होते खुदा की राह में उठ खड़े होते, यह लोग रसूलुल्लाह स0अ0 की मईयत में दस साल के अन्दर सत्ताइस बार जिहाद के लिये निकले और आपके हुकूमत से सौ मर्तबा से ज़ाएद कमरबस्ता होकर मैदाने जंग की तरफ़ गये। इनके लिये दुनिया से बेताल्लुकी आसान बन गयी थी। अहल व अयाल के मुसाएब बर्दाश्त करने के आदी बन गये थे। कुरआन की आयात वह बेशुमार एहकाम लायीं जो उनके लिये पहले से मानूस न थे। नफ़्स व माल औलाद, व ख़ानदान के बारे में एहकाम नाज़िल हुए जिनकी तामील कुछ हंसी खेल न थी लेकिन खुदा और रसूल की हर बात मानने की आदत पड़ गयी थी। शिर्क व कुफ़्र की गुत्थी जब सुलझ गयी तो सारी गुत्थियां हाथ लगाते ही सुलझ गयीं। रसूलुल्लाह स0अ0 ने एक बार उनके ईमान के लिये कोशिश फ़रमायी फिर हर अम्र व नही और हर नये हुक्म के लिये मुस्तक़िल कोशिश और जद्दोजहद की ज़रूरत न रही। इस्लाम व जाहिलियत के पहले मारके में इस्लाम ने जाहिलियत पर फ़तेह हासिल कर ली। फिर तो हर मौक़े के लिये हर बार नये मारके की ज़रूरत बाक़ी न रही। वह लोग अपने दिलों के साथ, अपने हाथं पांव के साथ, अपनी रूहों के साथ इस्लाम में दाख़िल हुए। उन पर जब हक़ वाज़ेह हो गया तो रसूलुल्लाह स0अ0 से कोई कशाकश बाक़ी न रही। आपके फ़ैसले पर उनको कभी ज़हनी या क़ल्बी कशमकश पेश न आती। जिस बात का आप फ़ैसला फ़रमा देते, ज़रा इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश बाक़ी न रहती। यह वह लोग थे जिन्होंने रसूलुल्लाह स0अ0 के रूबरू अपने छिपे क़सूरों का इक़रार किया और अगर किसी गुनाह में पड़ गये तो अपने जिस्मों को हुदूद और सज़ाओं के लिये पेश कर दिया। शराब की हुरमत का नुज़ूल हुआ है तो छलकते हुए जाम हथेलियों पर थे। अल्लाह का हुक्म उनके भड़कते हुए जिगर आलूदा लबों और शराब के प्यालों के बीच हायल हो गया। फिर क्या था हाथ को हिम्मत न थी कि ऊपर को उठ सके। लबों की तमन्नाएं वहीं सूख गयीं। शराब के बर्तन तोड़ दिये गये और शराब मदीना की गलियों और नालियों में बह रही थी।

जब शैतान के असरात उनके नुफ़ूस से धुल गये बल्कि यूं कहना चाहिये कि जब उनके नुफ़ूस के असरात उनके नुफ़ूस से ज़ायल हो गये, नफ़्सानियत का ख़ात्मा हो गया और वह लोग अपने नफ़्सों से वैसा ही बर्ताव करने लगे जैसा कि वह दूसरों से करते थे, दुनिया में रहते हुए मर्दाने आख़िरत और नक़द सूद के बाज़ाद में आख़िरत के क़र्ज़ को दुनिया के नक़द पर तरजीह देने वाले बन गये। न किसी मुसीबत से घबराते, न किसी नेमत पर इतराते। फ़क्र उनकी राह में रुकावट न बन सका, दौलत सरकशी पैदा न कर सकती, तिजारत ग़ाफ़िल न करती, किसी ताक़त से न दबते, अल्लाह की ज़मीन पर अकड़ने का ख़्याल भी न आता, बिगाड़ और तख़रीब का वहम भी न हो सकता, लोगों के लिये वह मीज़ाने अद्ल थे, वह इन्साफ़ के अलमबरदार थे, अल्लाह तआला के गवाह थे, ख़्वाह उनको अपने नफ़्स के ख़िलाफ़ गवाही देनी पड़े, ख़्वाह वालिदैन और अइज़्ज़ा के मुख़ालिफ़ जाना पड़े, तो अल्लाह तआला ने अपनी ज़मीन को उनके क़दमों में डाल दिया और दुनिया को उनके लिये मुसख़्ख़र कर दिया। वह उस वक़्त आलम के मुहाफ़िज़ और अल्लाह के दीन के दायी बन गये। रसूलुल्लाह स0अ0 ने उनको अपना जांनशीन बनाया और आप ख़ुद ठंडी आंखों के साथ रिसालत और उम्मत की तरफ़ से इत्मिनान लेकर रफ़ीक़े आली की तरफ़ सफ़र कर गये। (इन्सानी दुनिया पर मुसलमानों के उरूज व ज़वाल का असरः 58)

अफ़सोस का मक़ाम है कि इस्लाम दुश्मन ताक़तों के इशारे पर नाचने वाला मीडिया आज उन्हीं नुफ़ूसे क़ुदसिया की सीरत को मस्ख़ करना चाहता है और नस्ले नौ के ज़हनों मसमूम कर रहा है और नबी अकरम स0अ0 की पाकीज़ा तरबियत पर अपनी कोताह अक़्ल की रोशनी में बेतुके सवालात क़ायम करता है। ख़ास तौर पर कुछ चैनलों का हर्फ़ यही बन गया है कि उन्हें सहाबा किराम की शख़्सियत मजरूह करना है और नबी करीम स0अ0 की वफ़ात के बाद सहाबा–ए–किराम रज़ि0 के माबैन पेश आये वाक़्यात को मुद्दा बनाकर शक व शुब्हे का दरवाज़ा खोलना है। इन चैनलों ने सहाबा किराम पर तोहमतों का ऐसा सिलसिला शुरू किया है जिसकी बुनियाद पर बदज़नी और इस्लामी तारीख़ व अकाबिरे उम्मत पर अद्म ऐतमाद की फ़िज़ा बन रही है, जिनका इशाअते इस्लाम और दावते हक़ की राह में कलीदी किरदार रहा है।

इस्लाम का तसव्वुर–ए–हयात

मौलाना अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

आमाल की पाबन्दी बहुत अहम चीज़ है। चाहे इन्सान के आमाल कम हों या ज़्यादा हों। इसलिए कि आमाल की हैसियत हक़ीक़त में लक्षण अथवा पहचान की है। यानि आमाल अस्ल नहीं हैं बल्कि अल्लाह की रज़ा को पाने का एक ज़रिया है। अल्लाह तआला की नेमतें (उपकार) इतनी ज़्यादा हैं कि उन नेमतों का शुक्र कोई अदा कर ही नहीं सकता और क्योंकि शुक्र की एक शक्ल आमाल है अतः अगर कोई शख़्स नेमत के मुक़ाबले में आमाल अपनाना चाहे तो नहीं कर सकता। इसलिए अगर कोई यह समझता है कि आमाल की वजह से जन्नत मिलेगी तो यह नामुमकिन है। बल्कि आमाल के करने का हुक्म इसलिए दिया गया है ताकि मालूम हो जाए कि यह बन्दा ख़ुदा को मानने वाला और ख़ुदा की मानने वाला है या नहीं है। अर्थात आमाल से ख़ुदा की बन्दगी का इज़हार होता है। इसलिए अल्लाह तआला ने इन्सान को इन्हीं आमाल का जवाबदेह किया है जिनको करना भी संभव हो। यानि उन आमाल का हुक्म दिया है जिनके बारे में कोई यह नहीं कह सकता है कि हमारे अन्दर उनको पूरा करने की योग्यता नहीं है। अर्थात आमाल की बुनियाद पर जन्नत नहीं मिलेगी बल्कि आमाल लक्षण के तौर पर हैं जो उनको करेगा वह जन्नत पायेगा और अल्लाह तआला उसको जन्नत का सर्टीफिकेट दे देगा। जिसको यूं समझा जा सकता है कि जिस तरह जहाज़ से सामान जाता है तो उसको जहाज़ पर रखने से पहले मशीन से चेक किया जाता है, फिर निशान लगाया जाता है जो कि इस बात की पहचान है कि यह सामान पास हो चुका है लेकिन इसके अन्दर कुछ शर्तें रहती हैं कि कौन सा सामान लेकर जाया जा सकता है और कौन सा सामान नहीं ले जाया जा सकता है। बिल्कुल उसी तरह अल्लाह तआला ने भी लिमिटेड मामला रखा है और जो चीज़ें मना हैं उनकी निशानदेही भी कर दी है ताकि उसकी वजह से पकड़ न हो जाए। लिहाज़ा अगर कोई शख़्स ही आमाल के साथ जाएगा तो उसके आमाल पर इजाज़त का निशान लग जाएगा और उसको जन्नत मिल जाएगी।

क़ुरआन मजीद में यहूद व नसारा की तरफ़ यह इशारा किया गया है कि उनके दिल ज्यादा दिन गुज़रने से सख़्त हो गये हैं और दीनी कामों पर अमल न करने से उनके दिल ग़ाफ़िल हो गये हैं। इसलिए उन्होंने अपनी मनमानी शुरू कर दी है। अर्थात उन्होनें पूरे दीन का हुलिया ही बिगाड़ दिया है। वाक़्या यह है कि अगर उन्हीं के अनुपात में आज मुसलमानों की ज़िन्दगी को देखा जाए तो मालूम होगा कि उन्होंने भी दीन का हुलिया बिगाड़ रखा है और क़ुरआनी शिक्षाओं को पीठ के पीछे डालकर अलग–अलग तरह की ख़ुराफ़ातो में लगे हैं। इसीलिए हमेशा इस बात की ज़रूरत होती है कि हर चीज़ को साफ़ किया जाता रहे। अगर कोई शख़्स किसी कमरे को साफ़ न करे तो उसके अन्दर जाना मुश्किल हो जाएगा। लिहाज़ा इसी तरह ईमान पर भी गर्दा जम जाता है। और इसके अन्दर सच को स्वीकार करने की योग्यता समाप्त हो जाती हैं। इसीलिए कहा गया है कि ज़िक्र दिल को सैक़ल कर देता है। हदीस में आता है कि यानि अपने ईमान को "ला इलाहा इलल्लाह" के ज़रिये ताज़ा करो। अर्थात ज़िक्र और अल्लाह वालों के साथ बैठने से ईमान ताज़ा होता है। मगर सबसे पहले इन्सान की नियत का सही होना ज़रूरी है। वरना इसके बिना कुछ भी फ़ायदा हासिल होने वाला नहीं। बल्कि कभी–कभी अगर इन्सान की नियत ठीक नहीं होती है तो वह सीधे रास्ते से बहुत दूर भी चला जाता है। जिस तरह अगर जहाज़ की सुई अपनी निश्चित दिशा से ज़रा भी हट जाए तो वह बहुत दूर चला जाता है। इसीलिए कहा गया कि संतुलन के साथ चलना ज़रूरी है और आमाल की पाबन्दी करना भी ज़रूरी है क्योंकि किसी को नहीं मालूम कि उसको कौन सा अमल अल्लाह के यहां क़ुबूल कर लिया जाए। इसीलिए इन्सान को आख़िरी वक़्त तक इबादत करते रहना चाहिए। यहां तक कि मौत के वक़्त भी उसको अच्छी मौत नसीब हो। यानि ईमान और कलमे के साथ मौत आ जाए।

रिवायत से यह बात साफ़ तौर पर साबित है कि जिन आमाल को भी करना शुरू किया जाए उनकी पाबन्दी भी ज़रूरी हैं यहां तक कि हर हाल में करते रहना चाहिए। मरते–मरने करना चाहिए और करते–करते ही मरना चाहिए और मरते–मरते करने का मतलब यह है कि इन्सान को जिस तरह जवाबदेह बनाया गया है वह उतना ही काम मरते दम तक अंजाम दे और इन्सान को इन्हीं आमाल पर जवाबदेह बनाया गया है जिनको वह अदा कर सकता हो। मसलन आमाल में सबसे अहम चीज़ पांच वक़्त की नमाज़ है, जिसको हर शख़्स अदा कर सकता

है। इसीलिए जो लोग नमाज़ अदा नहीं कर रहे हैं वह गोया खुदा की बग़ावत कर रहे हैं और जो लोग नमाज़ पढ़ रहे हैं वह अल्लाह के हुक्म पर अमल कर रहे हैं लेकिन इसके बाद जन्नत खुदा के फ़जल ही से मिलगी। अलबत्ता नमाज़ एक पहचान है कि इन्सान खुदा के हुक्मों पर राज़ी है। लिहाज़ा अगर हमारी यह अलामात सही हो जाए तो अल्लाह तआला के यहां जन्नत में जाने के लिए इन आमाल पर सही टिक लग जाएगी। इसीलिए नमाज़ का ज़्यादा से ज़्यादा ध्यान रखना चाहिए । यहां तक कि अगर काई खड़े होकर नमाज़ नहीं पढ़ सकता तो उसको चाहिए कि वह बैठकर नमाज़ पढ ले, वरना लेट कर नमाज़ पढ़ ले और अगर कभी छूट जाए तो उसकी क़ज़ा कर ले। अर्थात यह तमाम आसानियां अता फ़रमा दी गई हैं जिसका मतलब यह है कि आपके अन्दर अल्लाह ने नमाज़ पढ़ने की सलाहियत भी रखी है वरना खड़े होने पर ताक़त न होने के बाद इन्सान से नमाज़ को रफ़ा किया जा सकता था। लिहाज़ा अगर कोई शख़्स नमाज़ नहीं पढ़ता है तो यह उसकी अपनी कोताही होगी लेकिन नमाज़ का फ़रीज़ा किसी से हट नहीं हो सकता सिवाए चन्द अपवाद की स्थितियों के, मसनल पागल पर नमाज़ नहीं है, और ख़ास दिनों में औरतो पर नमाज़ माफ़ है इत्यादि। इसी तरह इसके अलावा भी जो बक़िया आमाल हैं वह भी अदा करना ज़रूरी है।

लेकिन आमाल के अन्दर यह बात ज़हन में रखना ज़रूरी है कि इन्सान आमाल के अन्दर संतुलन का ध्यान रखे कि शुरू में इन्सान को बहुत जोश सवार हो जिसकी वजह से ऐसे–ऐसे वज़ीफ़े भी शुरू कर दिये जाएं जिनका कोई सुबूत नहीं है तो यह दुरूस्त नहीं होगा। बल्कि संतुलन का रास्ता अख़्तियार करना बहुत ज़रूरी है और एकाएक इन्सान के अन्दर उबाल का आ जाना ग़लत है क्योंकि कभी–कभी इन्सान जज़्बात में आकर बह जाता है इसीलिए ऐसा करना मुनासिब नहीं होगा बल्कि सोच–समझकर करना ज़रूरी होगा। इसीलिए एक हदीस में फ़रमाया गया है कि अल्लहा को सबसे ज़्यादा वह अमल पसंद है जो हमेशा किया जाए चाहे वह थोड़ा ही हो क्योंकि उसकी वजह यह है कि अगर थोड़ा हमेशा किया जाए तो वह बहुत हो जाता है और जो बहुत किया जाए लेकिन एकदम से किया जाए तो वह ज़ाया हो जाता है जिसके लिए कछुवे और ख़रगोश के मुक़ाबले वाली मसल मशहूर है जिससे मालूम होता है कि कछुवा सुस्त रफ़्तार से चलने के बावजूद भी अपनी मंज़िल तक पहुंच गया था और ख़रगोश पीछे रह गया था। इसीलिए इन्सान को लगातार चलना चाहिए। इसका ख़ास असर होता है। यहां तक कि अगर किसी जगह पर लगातार एक बूंद पानी टपकता है तो उस जगह में कुछ दिनों के बाद एक सुराख़ हो जाता है लेकिन अगर इसी के मुक़ाबले में तूफ़ान आ जाए तो कुछ ही देर के बाद पूरी ज़मीन फिर ठी का हो जाती है। लिहाज़ इससे भी यह सबक़ लिया जा सकता है कि अगर हमेशा कोई काम किया जाए चाहे वह थोड़ा ही हो तो उसका असर भी असाधारण होगा। जैसे ज़िक्र की पाबन्दी है इससे भी दिल पर बड़ा असर पड़ता है। इसकी मिसाल ऐसी है कि जिस तरह जब उंगली में जख़्म हो जाता है तो आदमी इस ज़ख़्म के साथ सारे काम भी करता है लेनिक ज़ख़्म को नहीं भूलता है उसी तरह जो शख़्स ज़िक्र वग़ैरह की पाबन्दी करता है तो वह किसी भी काम में लगा हुआ हो अल्लाह को नहीं भूलता तो फिर उसको अल्लाह हमेशा याद रहता है। इसलिए जिक्र कराया जाता है। मगर इसके लिए पाबन्दी ज़रूरी है वरना उसका असर कुछ भी नहीं हो सकता है लेकिन अगर इन्सानी कमज़ोरी की बुनियाद पर कभी किसी से कोई मामूल बाक़ी रह जाए तो इसको बाद में भी पूरा किया जा सकता है और इसका सवाब भी वैसा ही जैसा वक़्त पर पढ़ने से हासिल होता है।

आमाल में संतुलन के अन्दर यह बात भी शामिल है कि इन्सान इबादात के साथ सदक़े का भी ध्यान रखे। जिस वक़्त इन्सान कमाने पर भी कुदरत रखता हो उस वक़्त का सदका ज़्यादा सवाब वाला है क्योंकि अगर इन्सान अपने आखिरी वक़्त में सदक़ा करता है तो वह माल उसका नहीं रहता बल्कि उसकी औलाद का हो जाता है और यह भी इन्सान का बहुत बड़ा धोख है कि इन्सान माल को अपना समझता है हालांकि जिस माल को उसने ज़िन्दगी भर बहुत मुहब्बत से कमाया था चन्द ही दिनों बाद वही माल उकसी औलाद की तरफ़ चला जाता है और इसी तरह आगे हस्तान्तरित होता रहता है। अर्थात किसी के पास माल नहीं रुकता जिससे समझ में आता है कि अस्ल मिल्कियत अल्लाह तआला ही की है और तमाम मख़लूक़ (प्राणीवर्ग) उसकी मोहताज है।

मगर अफ़सोस की बात है कि आज उम्मत का एक बड़ा तबक़ा नेक कामों में निहायत सुस्ती का रवैया अपनाता है और शर के हर काम को अपना कर्तव्य समझता है। जबकि यह बात उसके ईमानी तक़ाज़े के ख़िलाफ़ है।

त्याग व समानता क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

त्याग का श्रेष्ठ उदाहरण:

"और वह (दूसरों को) अपनी जानों पर मुक़द्दम रखते हैं चाहे वह तंगदस्ती का शिकार हों।" (हश्र: 9)

इस आयत के नुज़ूल का पस मंज़र यह बयान किया जाता है कि एक मर्तबा रसूलुल्लाह स0अ0 की ख़िदमत में कुछ मेहमान आये, आपने अपने घरों में पूछा कि कुछ खाने में है? सब जगह यही जवाब आया कि अल्लाह के नाम के सिवा इस वक़्त घर में कुछ नहीं है, हम लोग खुद फ़ाक़े से हैं, रात के खाने का कोई इन्तिज़ाम नहीं है। आप स0अ0 ने मस्जिद में ऐलान फ़रमाया कि हमारे मेहमान आयें हैं, आज रात को कौन उनकी मेज़बानी करेगा? एक सहाबी खड़े हुए और उन्होंने कहा: अल्लाह के रसूल स0अ0! मैं हाज़िर हूं, उनको मैं अपने घर ले जाऊंगा और उन्होंने यह तहक़ीक़ भी नहीं कि मेरे घर में कुछ खाने को है या नहीं है। उन्होंने सोचा कि बड़ी सआदत की बात है कि मैं अल्लाह के रसूल स0अ0 के मेहमान को अपने घर ले जाऊंगा, लिहाज़ा उन मेहमान को घर ले गये और बीवी से पूछा कि खाने को कुछ है या नहीं हैं? बीवी ने जवाब दिया: खाने को कुछ नहीं है, सिर्फ़ बच्चों के लिये थोड़ा सा खाना बचा रखा है, सहाबी–ए–रसूल ने कहा: अब मैं अल्लाह के रसूल स0अ0 के मेहमान को लेकर आया हूं, इसलिए वह खाना उन्हीं को खिलाना है लिहाज़ा तुम बच्चों को किसी तरह बहला–फुसला कर सुला दो, और बच्चों का खाना अल्लाह के रसूल स0अ0 के मेहमान को खिला दो, और चूंकि हमें भी साथ बैठना होगा तो ऐसा करेंगे कि जब खाना शुरू होगा तो चिराग़ इस तरह बुझा देंगे जैसे हवा से बुझ गया हो और बस अपना हाथ मुंह तक ले जाएंगे और खाना नहीं खाएंगे, इस तरह वो लोग खा लेंगे और हम नहीं खाएंगे, हम यही ज़ाहिर करेंगे कि हम भी खा रहे हैं ताकि उनका पेट भर जाए, इसलिए कि खाना बहुत कम है और अगर हम भी खाएंगे तो पूरा नहीं होगा। इसलिए उन्होंने ऐसा ही किया, मेहमानों को दस्तरख़्वान पर बिठाया और जब बच्चों ने रोना शुरू किया तो उनकी मां ने बहला कर सुला दिया, जब बच्चे सो गये तो खाना लगाया और खुद भी साथ में बैठे और किसी बहाने से चिराग़ बुझा करके खाने में साथ रहे और हाथ ऊपर–नीचे करते रहे। मेहमानों ने समझा कि यह भी खा रहे हैं, हालांकि उन्होंने एक निवाला भी नहीं खाया। जब सुबह हुई तो हुज़ूर–ए–अक़दस स0अ0 की ख़िदमत में तश्रीफ़ लाए। रसूलुल्लाह स0अ0 को वही के ज़रिये इस वाक़्ये की इत्तेला मिल चुकी थी। आप स0अ0 ने उनके हाज़िर होते ही ख़ुशख़बरी सुनाई और मुबारक बाद दी, बाज़ रिवायात से मालूम होता है कि आप स0अ0 ने फ़रमाया; यह आयत नाज़िल हुई है:

"यह वे लोग हैं जो अपने ऊपर दूसरों को तरजीह देते हैं, चाहे वह फ़ाक़े से हों, भूक से हो, उनको खाने की ज़रूरत है लेकिन वह ख़ुद नहीं खा रहे हैं, दूसरों को खिला रहे हैं।"

हज़रात–ए–सहाबा का यह ग़ैर मामूली ईसार है। यह नमूने इसलिए बयान किया जाते हैं कि उम्मत किसी दर्जे में उन्हें अख़्तियार करे। यह सिर्फ़ वाक़्यात नहीं हैं कि वाक़्यात बयान कर दिये गये और कुछ मज़ा आया, वाक़्यात इसलिए बयान किये जाते हैं कि हम अपनी ज़िन्दगी को जो बिल्कुल दूसरे रुख़ पर जा रही है, उसको बेहतर बनाने की कोशिश करें।

बिगाड़ का कारण:

इस समय समाज में जो बीमारी सबसे ज़्यादा है वह

स्वार्थ की बीमारी है। हम यह नहीं चाहते कि दूसरों को इज़्ज़त मिले, दूसरों को तरक़्क़ी मिले, हमें हसद की आग खाने लगती है। यहां तक होता है कि आदमी चैन से नहीं बैठता और उस आग में ख़ुद भी जलता है और दूसरों को भी आजिज़ करता है। दूसरों को नीचा दिखाने के ऐसे–ऐसे उपाय करता है कि ख़ुद ही ज़लील होता चला जाता है। हदीस में आता है कि हसद की आग इन्सान को इस तरह से खाती है जैसे आग लकड़ी को खा जाती है। लकड़ी में आग लग जाए तो लकड़ी राख हो जाती है, इसी तरह अगर किसी शख़्स के अन्दर हसद की आग भड़क रही हो तो जलकर ख़ाक हो जाता है। न उसकी सेहत बाक़ी रहती है न ईमान। ईमान ख़तरे में पड़ जाता है, लेकिन ख़ुदगर्ज़ी का मिज़ाज ऐसा होता है कि आदमी फिर हलाल व हराम नहीं देखता, बस यह देखता है कि हमें हर चीज़ मिलनी चाहिये और आज सारी दुनिया में इसी का झगड़ा है, हमारे समाज के झगड़ों की बुनियाद यही है, वह झगड़े इदारे के हों, कुर्सी के हों, हुकूमत के हों, यहां तक कि दीनी इदारों और दीनी तहरीकों के झगड़े हों। अल्लाह माफ़ करे चूंकि हमारी तरबियत नहीं होती है, हमारे अन्दर ईसार नहीं है। इसका नतीजा यह है कि हम अपने को अहल समझते हैं और हमें यह ख़्याल रहता है कि हमको यह मन्सब मिलना चाहिये, हम उसके मुस्तहिक़ हैं, अगर ज़बान से नहीं भी कहें तो दिल में उसे पालते रहते हैं और जब ऐन वक़्त पर वह चीज़ नहीं मिलती तो एक आग सी लग जाती है और वह आग कभी इन्तिक़ाम की शक्ल में सामने आती है और कभी न जाने किन–किन शक्लों में सामने आती है। अगर ग़ौर करें तो यही सूरते हाल हमारे इदारों और तहरीकों की है। अगर कोई भी काम में थोड़ा आगे बढ़ गया है तो साथ वाले बर्दाश्त नहीं कर पाते और इसकी वजह यह है कि हमारा मिज़ाज दीनी नहीं है। हमारी जो तरबियत होनी चाहिये वह नहीं हुई है।

बीमारी का इलाज:

सहाबा के वाक़्यात मुख़्तलिफ़ मुनासिबतों से इसलिए पेश किये जाते हैं कि यह नमूना हैं, उनसे आदमी फ़ायदा उठाए, अपनी ज़िन्दगी को बनाने की कोशिश करे। इसकी ज़रूरत हम सबको है। आदमी देखे कि हमारे अन्दर क्या–क्या चीज़ पल रही है। कुछ बीमारियां कैंसर की तरह होती हैं, जिनका आदमी को पता नहीं चलता और जब तक पता चलता है तब तक उसकी जान मुसीबत में पड़ जाती है। इसी तरह इन्सान को तब पता चलता है जब ईमान ख़तरे में पड़ जाता है, इसीलिए पहले से देखने की ज़रूरत है। अपना चेकअप करवाने की ज़रूरत है और यह चेकअप अल्लाहवालों के यहां होता है, यह डॉक्टर हैं, उनके पास बड़ी मशीनें हैं, अल्लाह ने उनको ईमान की ताक़त दी है। उनकी ख़िदमत में आदमी जाता है, उनकी संग रहता है, तो यह देखकर बताते हैं कि तुम्हारे अन्दर यह बीमारियां हैं और कई बार नहीं भी बताते हैं, जैसा कि कई बार आप मरीज़ से बता दें कि तुम कैंसर के मरीज़ हो तो वह मर जाएगा, लेकिन अब डाक्टरों का हाल बहुत बुरा है। यह भी ख़ुदगर्ज़ी की बात है कि डॉक्टर मुंह पर ही कह देते हैं कि तुम दो महीने के बाद मर जाओगे। ज़ाहिर है कि अगर उसको नहीं मरना है तो मर जाएगा। लेकिन अल्लाह वाले हुक्मा होते हैं। वह कभी–कभी बताते भी नहीं है, लेकिन रूहानी बीमारी का इलाज करते हैं और इलाज का तरीक़ा बताते हैं। ज़िक्र के तरीक़े बताते हैं और उससे आदमी के अन्दर बदलाव पैदा होते हैं। वह सिफ़ात पैदा होती हैं जो मतलूब हैं, इसलिए अपनी इलाज कराने की ज़रूरत पड़ती है। हमारा हाल यह है कि न जाने कैसी बीमारियों में पड़े हैं, हमें ख़ुद उनका पता नहीं, इसलिए हमें इलाज कराना पड़ेगा, जब अच्छी सिफ़त पैदा होंगी तो हम आगे बढ़ेंगे, हमारा समाज आगे बढ़ेगा। आज समाज का बिगाड़ इसी वजह से है कि हम अपना रूहानी इलाज नहीं करवाते, और फिर बड़े–बड़े ओहदों पर पहुंच जाते हैं। बड़े–बड़े काम सुपुर्द हो जाते हैं और हमारा इलाज नहीं होता है। इसका नतीजा यह होता है कि हम काम को भी बिगाड़ देते हैं और उसके वह फ़ायदे हासिल नहीं होते जो होना चाहियें। इसलिए ज़रा कोशिश करने की ज़रूरत पड़ती है।

मुसलमानों पर अत्याचार कब तक?

मौलाना असरारुल हक़ क़ासमी

वर्तमान युग में यूं तो हर जाति व हर वर्ग अनगिनत समस्याओं से घिरा हुआ है। लेकिन इस्लामी उम्मत दूसरी जातियों व क़ौमों की तुलना में ज़्यादा समस्याओं से घिरी हुई नज़र आती है। मुसलमान केवल एक देश में समस्याओं का सामना नहीं कर रहे हैं बल्कि लगभग हर देश में समस्याओं से घिरे हुए हैं। जबकि मुसलमानों को दूसरी सभी जातियों व क़ौमों की तुलना में समस्याओं का कम सामना होना चाहिये था क्योंकि वो जिस दीन के मानने वाले हैं वो समस्याओं से छुटकारा पाने के लिये बेहतरीन और व्यापक शिक्षांए प्रस्तुत करता है। इस्लाम जीवन के हर वर्ग में अपने मानने वालों का बेहतरीन मार्गदर्शन करता है। वो ऐसे उसूल बताता है जिस पर चलकर इन्सान की कामयाबी दोनों जहां में यक़ीनी है। मगर उसके बावजूद हमें नज़र आता है कि दुनिया में मुसलमान परेशान हैं। ज़िल्लत व रुस्वाई का सामना कर रहे हैं। अस्ल में इसका कारण ये है कि वो इस्लाम के मानने वाले तो हैं लेकिन इस्लामी शिक्षाओं पर बहुत से मुसलमानों का अमल नहीं है। ज़ाहिर सी बात है कि जब वो इस्लामी शिक्षाओं पर कार्यरत नहीं होंगे तो जीवन के विभिन्न वर्गों में उन्हें सफलता कैसे मिल सकेगी?यही वो राज़ है जिसके कारण मुसलमान मुसीबतों का सामना कर रहे हैं, समस्याओं से घिरे हुए हैं। पतन की ओर अग्रसर हैं।

आम तौर से ऐसा नज़र आ रहा है कि जिस प्रकार दूसरी जाति व क़ौमें जीवन व्यतीत कर रही हैं, उसी प्रकार मुसलमान भी जीवन व्यतीत कर रहें हैं। मिसाल के तौर पर वर्तमान युग में भौतिकवादी उन्नति को उन्नति समझा जा रहा है तो मुसलमान भी भौतिकता की प्राप्ति को उन्नति समझ रहे हैं। इसलिये सारा ज़ोर अपनी अर्थव्यवस्था को स्दृढ़ करने में लगाये हुए हैं। अर्थव्यवस्था पर सारा ध्यान देने के कारण जीवन असंतुलित हो गया है। जीवन के दूसरे भाग जैसे व्यवहारिकता, सामाजिकता, सभ्यता, शिक्षा, दीन व धर्म, मानवीय मूल्यों से या तो आज के मनुष्यों का रिश्ता बिल्कुल टूट गया है या फिर केवल नाम का रह गया है। वास्तव में धन–दौलत को अपने जीवन का उद्देश्य बना लेने के कारण आज के इन्सान का सारा झुकाव भौतिकता की ओर हो गया और जीवन से दूसरे बहुत से हिस्से हट गये।

ये बहुत अफ़सोस की बात है कि दौलत कमाने के लिये जायज़ व नाजायज़ तरीक़ों के बीच कोई अन्तर ही नहीं किया जाता है। न ब्याज के लेन–देन का ख़्याल रखा जा रहा है। न झूठ बोलने से परहेज़ किया जा रहा है। न पद व वादों का ख़्याल रखा जा रहा है। आजकल तो देखने में ये आ रहा है कि जैसे भी हो लोग पैसा कमाना शुरू कर देते हैं। ऐसी स्थिति में मनुष्य मानवीय मूल्यों की भावनाओं से वंचित हो जाता है। यहां तक कि मनुष्य का जीवन के वो हिस्से जिनका संबंध केवल मानवसेवा से था, उसको भी दौलत कमाने का ज़रिया बना लिया गया। जैसे शिक्षा जो हर मनुष्य के जीवन के लिये आवश्यक है और जिसके द्वारा न केवल मनुष्य को जीवन यापन का प्रकाश प्राप्त होता है बल्कि उसके वास्ते से मनुष्य की छिपी हुई योग्यताओं को भी निखरने का मौक़ा मिलता है, उसे भी एक कारोबार बना लिया गया है। अतः आज शिक्षा के द्वारा मोटी–मोटी रक़में कमायी जा रही हैं। जबकि कुछ सदियों पहले शिक्षा व्यवसाय न थी, सेवा थी। जो लोग शिक्षित होते वो अपने ऊपर मानव सेवा को आवश्यक समझते थे। ज्ञान के वो पहाड़ जो बच्चों को शिक्षा देते यहां तक कि उन्हें विभिन्न ज्ञानों व कलाओं का माहिर बना देते। उन्हें गणित में चरम तक पहुंचा देते। उन्हें मनोवैज्ञानिक बना देते। उन्हें उस समय का प्रसिद्ध चिन्तक जब विभिन्न विषयों के माहिर बन कर अमल के मैदान में जाते तो वो भी उसी मानव सेवा के भाव से परिपूर्ण होकर काम करते हैं और अपनी पूरी ज़िन्दगी इसी लिये वक़्फ़ करते थे। दौलत की प्राप्ति का विचार भी उनके मन में न आता था। लेकिन जब वो छात्र जो मोटी–मोटी रक़में ख़र्च करके गणित, विज्ञान, तकनीक, इतिहास, मनोविज्ञान इत्यादि की शिक्षा प्राप्त करते हैं। वो शिक्षा प्राप्त होने के बाद बड़े पैमाने पर उनके द्वारा दौलत कमाने का इरादा रखते हैं। यही हाल इस समय चिकित्सा का भी हुआ है कि चिकित्सा को पूरी तरह पैसे कमाने का साधन बना लिया गया है। वो छात्र जो बीमारी दूर करने की विधि जानने के लिये कालिजो या यूनिवर्सिटयों का रूख़ करते हैं उनके ज़हन में पहले से ये बात होती है कि वो डाक्टर बनने के बाद अपना क्लीनिक बनायेंगे जहां ख़ूब पैसा कमांएगे, क्योंकि उनकी या उनके मां–बाप की

निगाहों में डाक्टरी केवल एक पैसा कमाने का पेशा मात्र है। इसलिये वो इसकी शिक्षा पर मोटी रक़में भी ख़र्च करते हैं। एम.बी.बी.एस या एम.डी. इत्यादि में प्रवेश पाने के लिये छात्र बेचैन रहते हैं और इशारे पर लाखों रूप्ये ख़र्च करने के लिये तैयार रहते हैं। केवल पैसे तक इसको संकुचित करने का ही परिणाम है कि बहुत से डाक्टरों को मरीज़ों से इन्सानी हमदर्दी नज़र नहीं आती। उनकी नज़र तो बस मरीज़ की जेब पर होती है। इसीलिये प्राइवेट अस्पतालों या क्लीनिकों में मरीज़ के पहुंचने के साथ ही विभिन्न प्रकार के चार्जेज़ बता दिये जाते हैं। यदि मरीज़ इतने रूप्ये ख़र्च करने की क्षमता रखता है तो उसका इलाज किया जाता है वरना उसे हाथ भी नहीं लगाया जाता, चाहे वो मौत व ज़िन्दगी की कशमकश में ही क्यों न हो। इस सीमा तक डॉक्टरों के भौतिकवादी होने और सेवा भाव से वंचित होने के कारण गुर्दों और मानव अंगों की चोरी की वारदातें भी कभी–कभी सामने आती रही हैं।

ऐसे हालात में मुसलमानों पर ये ज़िम्मेदारी आती है कि वो अपने कर्तव्यों का निर्वाह करते हुए तबाह होती हुई मानवता को बचाने में महत्वपूर्ण किरदार अदा करें। मुसलमानों को मानवता की भलाई के लिये ठोस क़दम उठाकर मानवता का बेहतरीन नमूना पेश करना चाहिये। दुनिया भर के मुसलमानों को चाहिये कि वो अपनी ज़िन्दगी को केवल पैसे ही तक संकुचित न रखें बल्कि उनकी ज़िन्दगी आत्मिकता व जीवन के दूसरे वर्गों को भी अपने अन्दर समेटे हुए हो। पैसे से उनका संबंध आवश्यकता की हद तक हो। जब वो पैसा कमाने निकले तो हराम व हलाल के अन्तर को ध्यान में रखे। यही उनका दीन सिखाता है। अपने व्यापार के दौरान सच से काम ले। आप स0अ0 ने फ़रमायाः (सच्चा अमानतदार व्यापारी! क़यामत के दिन सच्चों और शहीदों के साथ उठाया जायेगा) रसूलुल्लाह स0अ0 की इस हदीस पर अमल करने के बाद मुसलमानों का कारोबार पाक होगा और उनकी कमाई में हराम का शुब्हा तक न होगा जिसका पूरा सवाब उन्हें क़यामत के दिन तो मिलेगा ही लेकिन दुनिया में भी उन्हें इसके बेहतरीन परिणाम नज़र आयेंगे। उनका समाज गुणी होगा और उनके द्वारा मानवीय मांगों की पूर्ति भी होगी।

अर्थव्यवस्था को एक हद तक महदूद रखने के बाद मुसलमानों को चाहिये कि वो अपने अस्ल माबूद की इबादत और उसकी हम्द व तस्बीह करने में लग जाये। जिस मक़सद के लिये उन्हें दुनिया में भेजा गया है उसे पूरा करने पर अपना पूरा ध्यान दे। रसूलुल्लाह स0अ0 की सीरत और आप स0अ0 हदीसों से भी मालूम होता है कि मानवजीवन केवल व्यापर तक सीमित नहीं है। बल्कि अल्लाह तआला की तस्बीह बयान करना और भी इन्सानी ज़िन्दगी के लिये ज़रूरी है। इसीलिये आप स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः (मुझे ये वही नहीं भेजी गयी कि और व्यापारी बन जाओ, बल्कि मेरे पास वही भेजी गयी है कि अल्लाह तआला की तस्बीह करो और सजदा करने वालों में से बनो)

अल्लाह की इबादत, बेहतरीन मामला, श्रेष्ठ व्यवहार, मानव सभ्यता और मानव मूल्य जैसे वर्गों का भी लिहाज़ करके अगर मुसलमान अपनी ज़िन्दगी गुज़ारे तो उनकी ज़िन्दगी न केवल उनके लिये बेहतरीन होगी बल्कि दूसरी क़ौमें भी उनसे प्रभावित हुए बग़ैर न रह सकेंगी और अपनी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिये उन्हें भी मुसलमानों जैसी ज़िन्दगी गुज़ारने पर मजबूर होना पड़ेगा। मुसलमान ख़ुशक़िस्मत हैं कि उनके पास वो दीन है जो हर मोड़ पर उनका पूरा मार्गदर्शन करता है। इस्लाम की रोशनी से दूसरी क़ौमें अपरिचित हैं। वो दीन पर चलकर अपनी समस्याओं से छुटकारा पा सकती हैं।

शेषः ईमान की सलामती

.....दूसरों को भी इस दौलत में शरीक करेंगे, तो दूसरे भी उसको अज़ीज़ रखेंगे और उसकी सरहदों की हिफ़ाज़त करेंगे।

अब जो ज़माना आ रहा है वह नया ज़माना है। इसमें नये इन्तिख़ाबात होंगे। नई हुकूमत बनेगी और जो लोग हुकूमत बना सकते हैं वह क़ानून भी बना सकते हैं। इसलिए मुसलमानों को नये ख़तरो और नये चैलेंजो का मुक़ाबला करने के लिये तैयार रहना होगा, और दूसरों को भी सब्र व इस्तिक़ामत की तलक़ीन व तरग़ीब देनी होगी। अगर हमने इख़्लास व इस्तिक़ामत का सुबूत दिया और ख़ुदा को हाज़िर व नाज़िर जानकर सारे काम किये, तो कामयाबी हमारे क़दम चूमेगी, लेकिन अगर मुसलमानों ने दीनी तालीम के मामले में कोताही की तो मुसलमान मुसलमान बनकर इस मुल्क में नहीं रह सकते, किसी और चीज़ का ख़तरा हम नहीं बताते, खाने को भी मिलता रहेगा, जानवरों को भी मिलता है, ग़ैर मुस्लिम भी आपसे अच्छा खाते हैं, लेकिन अल्लाह और उसके रसूल के यहां आप मुसलमान नहीं समझे जाएंगे, और इस्लाम और मुसलमानों के रजिस्टर में आपका नाम नहीं लिखा जाएगा।

ज़कात के कुछ मसले

मुफ्ती राशिद हुसैन नदवी

ज़कात इस्लाम का एक महत्वपूर्ण अंग है। कुरआन पाक में जगह–जगह नमाज़ के साथ ज़कात देने पर भी ज़ोर दिया गया है। आप स0अ0 ने इसे इस्लाम के पांच बुनियादी हिस्सों (मूलभूत कर्तव्य) में से एक बताया है।

सोने–चांदी का निसाब (मात्रा)

चांदी की मात्रा दो सौ दिरहम जबकि सोने की मात्रा बीस मिसक़ाल है। हिन्दुस्तान के उलमा की खोज चांदी के दो सौ दिरहम यानि साढ़े बावन तोला (612.360 ग्राम) और सोने के बीस मिसक़ाल यानि साढ़े सात तोला (87.480 ग्राम) के बराबर होते हैं। जहां तक नक़द और व्यापारिक माल का संबंध है तो उनकी मिल्कियत का अनुमान भी चांदी के की मात्रा से किया जायेगा यानि अगर किसी के पास चांदी की मात्रा के बराबर नक़द रक़म या व्यापारिक माल है तो वो शरीअत के अनुसार साहबे निसाब (जिस पर ज़कात अनिवार्य हो) है।

फिर ये भी ध्यान रहे कि सोना–चांदी चाहे इस्तेमाल हो रहे ज़ेवर की शक्ल में हो या न इस्तेमाल हो रहे ज़ेवर की शक्ल में हो, चाहे सिक्कों या ज़ुरूफ़ वग़ैरह की शक्ल में हो, अगर वह निसाब (मात्रा) के बराबर है और उस पर साल गुज़र जाता है तो उसकी ज़कात बहरहाल वाजिब (अनिवार्य) हो जायेगी। यही आदेश नक़द रक़म का भी है। लेकिन बक़िया दूसरे माल यानि उरूज़ में ये भी शर्त है कि वो व्यापार की नियत से हों वरना उन पर ज़कात वाजिब नहीं होगी।

किसी के पास निसाब के बराबर (मात्रानुसार) ज़कात का माल है तो अगर साल के बीच में उस माल में बढ़ोत्तरी होती है तो उस बढ़े हुए माल का हिसाब पहले से मौजूद माल की तारीख़ से किया जायेगा। जब बक़िया माल पर साल गुज़र जाये तो उसकी ज़कात के साथ उस ज़ायद माल की भी ज़कात निकालना ज़रूरी होगा ये नहीं कि हर बढ़ोत्तरी के लिये अलग से साल का हिसाब किया जाये और यह कि साल गुज़रने में अंग्रेज़ी महीनों के बजाये चाँद के महीनों का हिसाब किया जायेगा।

व्यापारिक माल के बारे में आ चुका है कि उन पर ज़कात अनिवार्य है। जैसे अगर किसी की दुकान या कोई कारोबार है तो साल गुज़रने के बाद उसके पास जो कुछ नक़द रक़म या सामान है उसकी ज़कात उस पर फ़र्ज़ है और सामान का मूल्य निकालते समय उनके उसी दिन के मूल्य का एतबार होगा जिस दिन वो उनकी ज़कात अदा कर रहा है।

शेयर पर ज़कात

ज़कात हर प्रकार के व्यापारिक माल पर अनिवार्य है चाहे वो जानवरों का व्यापार हो या गाड़ियों का व्यापार हो या ज़मीन का और क्योंकि शेयर भी व्यापारिक माल के अन्तर्गत आते हैं अतः उन पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। अगर किसी ने शेयर इस उद्देश्य से ख़रीदे हैं कि उन पर वार्षिक लाभ लेगा, उनको बेचेगा नहीं, तो उसको अपनी कम्पनी से ख़बर करनी चाहिये कि उसका कितना सामान अचल है जैसे बिल्डिंग और मशीनरी इत्यादि की शक्ल और कितना माल चल है जैसे नक़द, कच्चा माल तैयार माल इत्यादि। जितनी सम्पत्ति अचल है उन पर ज़कात नहीं होगी और जितनी सम्पत्ति चल है उन पर ज़कात अनिवार्य होगी। अगर कम्पनी के माल का विवरण न मिल सके तो इस हालत में एहतियात के तौर पर पूरी ज़कात अदा कर दी जाये और अगर शेयर इस उद्देश्य से ख़रीदे हैं कि जब बाज़ार में उनकी क़ीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेच करके लाभ कमायेगें तो पूरे शेयर की पूरी बाज़ारी क़ीमत पर ज़कात अनिवार्य होगी। जैसे आपने पचास रूपये के हिसाब से शेयर ख़रीदे और मक़सद ये था कि जब उनकी कीमत बढ़ जायेगी तो उनको बेचकर मुनाफ़ा कमाएंगे। उसके बाद जिस दिन आपने ज़कात का हिसाब निकाला उस दिन शेयर की क़ीमत साठ रूपये हो गयी तो अब साठ रूपये के हिसाब से उन शेयर की मालियत निकाली जायेगी और उस पर ढ़ाई प्रतिशत के हिसाब से ज़कात अदा करनी होगी।

प्राविडेन्ड फ़न्ड पर ज़कात

ज़कात फ़र्ज़ होने की एक अहम शक्ल ये भी है कि उस पर इनसान का सम्पूर्ण नियन्त्रण भी हो। इसी कारण से फ़ुक़्हा (धर्मज्ञाताओं) ने कहा है कि अगर किसी को कर्ज़ दिया और बाद में क़र्ज़ लेने वाला उससे इनकार कर रहा है बज़ाहिर उसका मिलना मुश्किल है या किसी जगह डालकर भूल गया या किसी दरिया इत्यादि में गिर गया तो उन रूपयों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। फिर जब अप्रत्याशित रूप से यह माल मिल जाये तो गुज़रे हुए

सालों की ज़कात उस पर वाजिब नहीं होगी। ये रक़म जिस वक़्त मिली है उस वक़्त से उसका हिसाब लगाया जायेगा। (हिन्दिया 1/187)

जहां तक प्राविडेन्ड फ़न्ड का संबंध है तो इसमें एक हिस्सा वो हेाता है जो शासन उसमें मिलाकर देता है। जहां तक इस दूसरी बढ़ी हुई राशि का संबंध है तो चाहे उसे ईनाम कहा जाये या सेवा का मेहनताना जिसका अभी मालिक नहीं हुआ है। अतः उस पर गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब होने का कोई करण नहीं है। चर्चा योग्य फ़न्ड का वो हिस्सा है जो सेवा के दौरान वेतन से कटकर जमा होता है इसका मामला ये है कि कर्मचारी इसका अधिकारी है लेकिन उस पर अधिकार प्राप्त नहीं हुआ है अतः इस रक़म पर भी गुज़रे हुए दिनों की ज़कात वाजिब नहीं होगी। उलमा–ए–मुहक़्क़ीन का रूझान इसी तरफ़ है।

सोने और चांदी को मिलाना

किसी के पास साढ़े सात तोला (612.480 ग्राम) सोना न हो लेकिन उसके पास कुछ सोना और कुछ चांदी मौजूद हो तो क्या उसके ऊपर ज़कात वाजिब हो जायेगी। इस मसले में दो राय हैं:

1– इमाम शाफ़ई और कई दूसरे लोगों के निकट उस पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। इमाम शाफ़ई ने अपनी किताब अलउम में इस पर बहस की है कि उसके पास न सोने की पर्याप्त मात्र है न चांदी की तो उस पर ज़कात कैसे वाजिब हो सकती है जबकि दोनो अलग–अलग जिंस (धातु) हैं।

2– दूसरी राय हनफ़ी मसलक और कई दूसरे लोगों की है कि अगर दोनों के मिलाने से पर्याप्त मात्रा हो जाये तो ज़कात अनिवार्य हो जायेगी। इस पर बहस बुकैर इब्ने अब्दुल्लाह रज़ि0 की रिवायत से कि ज़कात निकालने में सहाबा का तरीक़ा चांदी और सोने के मिलाने का था। फिर दोनों क़ीमत के एतबार से एक ही जिंस (धातु) हैं।

बहरहाल अक़्ली दलील दोनों तरफ़ से मज़बूत हैं लेकिन मनक़ूली दलील में इस एतबार से प्रथम पक्षधर का पक्ष कुछ मज़बूत घोषित किया जाता है कि हज़रत बुकैर की रिवायत हदीस की किताब में नहीं मिलती। फिर इमाम अबू हनीफ़ा और साहिबैन की बीच ये मतभेद है कि सोने और चांदी को मिलाने की कैफ़ियत क्या होगी।

इमाम अबू हनीफ़ा के निकट दोनों को मूल्य के अनुसार मिलाया जायेगा। यानि अगर किसी के पास दो तोला सोना और दो तोला चांदी है तो ये देखा जायेगा कि दो तोला सोना अगर बेच दिया जाये तो क्या साढ़े बावन तोला या उससे ज़्यादा चांदी हासिल हो जायेगी। अगर इतनी ज़्यादा चांदी हासिल हो सकती है तो वो साहिबे निसाब माना जायेगा। फ़तवा इमाम साहब के कथन ही पर है जबकि साहिबैन (अर्थात इमाम अबू हनीफ़ा के दो शिष्य इमाम अबू यूसुफ़ और इमाम मुहम्मद) के नज़दीक दोनों को जुज़ (हिस्से) के एतबार से मिलाया जायेगा यानि वज़न के एतबार से अगर आधा निसाब सोने का और आधा चांदी या दो तिहाई साने का और एक तिहाई चांदी का या एक चौथाई सोने का और तीन चौथाई चांदी का पाया जा रहा हो तो ज़कात वाजिब हो जायेगी वरना नहीं।

इमाम साहब के कथन के अनुसार अगर सोने–चांदी की मामूली मात्रा भी किसी के पास हो तो वो साहिबे निसाब बन जायेगा और उसके लिये ज़कात लेना जायज़ नहीं रहेगा। इतनी मामूली मिक़दार बिल्कुल मामूली लोगों के पास भी आम तौर से रहती है। इस परिस्थिति में ये सवाल उठाया जाता है कि क्या मौजूदा हालात में साहिबैन के कथन को अपनाया जा सकता है। इसलिये कि साहिबैन के कथन पर चला जाये तो इसमे ज़कात देने वाले और लेने वाले दोनों का ख़्याल हो जायेगा और संतुलन बना रहेगा।

लेखक के ख़्याल से ऐसा करने की गुंजाइश है। इसलिये कि इस मसले का संबंध हालात के बदलने से है और इस बात पर सहमति है कि हालात बदल जाये तो आदेश बदल जाता है। फिर ये तो इफ़्ता के हुक्म में भी लिखा हुआ है कि मतभेद अगर साहिबैन और इमाम साहिब के बीच में तो मुफ़्ती उनमें से किसी पर भी फ़तवा दे सकता है। लिहाज़ा सामूहिक शोध के इस दौर में उलमा सहमत हो जायें तो इसकी गुंजाहश होगी। फिर इमाम साहब की एक रिवायत साहिबैन के कथन के मुताबिक़ भी है लिहाज़ा इमाम साहब के इस क़ौल को इस्तहबाब पर महमूल करके ततबीक़ की जा सकती है। मुफ़्ती किफ़ायत उल्ला साहब ने किफ़ायतुल मुफ़्ती में इसी तरह ततबीक़ दी है।

बात का अर्थ यह है कि व्यापारिक माल वाले मसले में मुफ़्ता बिही हुक्म से हटने की इजाज़त नहीं दी जा सकती जबकि दूसरे मसले में अगर उलमा इत्तिफ़ाक़ कर लें तो इसकी गुंजाइश है।

ज़कात के हक़दार

ज़कात की हैसियत चूंकि केवल सामान्य ख़र्च और

इनसानी मदद की नहीं है बल्कि ये एक महत्वपूर्ण इस्लामी इबादत और शरई कार्य है इसलिये शरीअत ने इसके ख़र्च निश्चित कर दिये हैं, अल्लाह तआला का इरशाद है: "ज़कात फ़क़ीरों, ग़रीबों, आमलीन (ज़कात के एकत्रीकरण व बंटवारे के कार्यकर्ता) मुअल्लफ़तुल कुलूब, (इस्लाम कुलूब करने वालों के दिलजोई हेतु ख़र्च) गुलाम, क़र्ज़दार, अल्लाह के रास्तें में (जिहाद करने वाले) और यात्रियों के लिये, ये अल्लाह की तरफ़ से तय हुआ काम है और अल्लाह बड़ा ज्ञानी और हिकमत वाला (तत्वदर्शी) है।"

ज़कात को ख़र्च करने के बारे में कुरआन मजीद की ऊपर वर्णित आयत में स्पष्ट रूप से बताया गया है। इसके संबंध में बात यह है कि ज़कात सिर्फ़ उन्हीं लोगों को दी जा सकती है जो फ़क़ीर या ग़रीब हों। यानि जिनके पास या तो माल ही न हो या अगर हो तो निसाब तक न पहुंचता हो। यहां तक कि अगर उनके अधिकार में ज़रूरत से ज़्यादा ऐसा सामान मौजूद है जो साढ़े बावन तोला चांदी की क़ीमत तक पहुंच जाता है तो वो ज़कात के मुस्तहिक़ नहीं है। ज़कात का मुस्तहिक़ वो है जिसके पास साढ़े बावन तोला चांदी की मिल्कियत की रक़म या उतनी मालियत का कोई सामान ज़रूरत से ज़्यादा न हो। इसमें भी शरीअत का हुक्म ये है कि ज़रूरत मन्द को मालिक बना दिया जाये और वो जिस तरह चाहे उसे खर्च करे। इसीलिये बिल्डिंग के निर्माण में ज़कात नहीं लग सकती, न ही किसी संस्था के कर्मचारी की पगार में लग सकती है। इसी तरह कफ़न–दफ़न में ज़कात का पैसा लगाना ठीक नहीं है।

ज़कात अदा करने वाले को चाहिये कि अच्छी तरह पड़ताल करके सही जगह पर लगाने की कोशिश करे। श्रेष्ठ यह है कि सबसे पहले अपने रिश्तेदारों व क़रीबियों में ग़रीब की तलाश करे। रिश्तेदारों में ज़कात अदा करने से डबल सवाब मिलता है। एक ज़कात अदा करने का दूसरे सिलारहमी (रिश्तेदारी निभाना) करने का। यद्यपि दो रिश्ते ऐसे हैं जिनको ज़कात देना ठीक नहीं है। पहला पैदाइशी रिश्ता है जिसके तहत सभी नियम आते हैं। इसीलिए अपने बाप, दादा, नाना, नानी, दादी और उन से ऊपर को ज़कात देना ठीक नहीं है, इसी तरह बेटे, पोते, बेटी, पोती, नवासा, नवासी, और उनसे नीचे वालों पर ज़कात देना ठीक नहीं है। दूसरा निकाह का रिश्ता है इसलिए पति पत्नी को और पत्नी पति को ज़कात नहीं दे सकती है। इन दोनों रिश्तों के अलावा सभी रिश्तेदारों को ज़कात देना जायज़ है। जैसे– भाई, बहन, चचा, फूफी और ख़ाला इत्यादि, लेकिन शर्त यह है कि जिसको ज़कात दी जा रही है वह ज़कात का मुस्तहिक़ हो, यह भी ध्यान रहे कि अपने क़रीबी रिश्तेदारों को यदि यह बताकर ज़कात दी जाए कि यह ज़कात की रक़म है तो हो सकता है कि उन्हें बुरा लगे, इसीलिये शरीअत ने यह सहूलत दी है कि ज़कात देते समय यह बताना आवश्यक नहीं है कि यह ज़कात है। मुस्तहिक़ होने के साथ साथ एक ज़रूरी शर्त ये है कि मुस्तहिक़ मुसलमान हो। इसीलिये ग़ैर मुस्लिम मुस्तिहिक़ को ज़कात की राशि देना ठीक नहीं है। आप स0अ0 ने फ़रमाया कि ज़कात मुसलमान मालदारों से ली जायेगी और ग़रीब मुसलमानों पर ख़र्च की जायेगी।

(बुख़ारी 1496)

मदरसों में ज़कात ख़र्च करने में दोहरा सवाब मिलेगा। एक ज़कात का दूसरे इल्म को फैलाने और दीन की हिफ़ाज़त का।

इसी तरह क़रीबी रिश्तेदारों में ज़कात अदा करने से डबल सवाब मिलता है। एक ज़कात अदा करने का दूसरे सिला रहमी करने का। जैसे भाई, बहन, चचा, फूफी, मामू, भांजे इत्यादि को ज़कात देना शरीअत के अनुसार ठीक ही नहीं बल्कि श्रेष्ठ भी है। रसूलुल्लाह स0अ0 ने फ़रमाया:

"मिस्कीन को देने में एक सदक़े का सवाब है और रिश्तेदारों को देने में दो सदक़े का सवाब है, एक सदके का दूसरा सिलारहमी का।"

रमज़ानुल मुबारक में चूंकि हर फ़र्ज़ इबादत का सवाब सत्तर गुना बढ़ जाता है इसलिये रमज़ान में ज़कात देने में इन्शाअल्लाह सत्तर गुना सवाब की उम्मीद है। (लेकिन इसका मतलब ये नहीं कि सारी ज़कात रमज़ान में ही निकाल दी जाये और ग़ैर रमज़ान में फ़क़ीरों की ज़रूरतों का ख़्याल न रखा जाये, बल्कि ज़रूरत व मस्लिहत के एतबार से ख़र्च करने का एहतिमाम करना चाहिये)

एक फ़क़ीर को एक साथ इतना माल देना कि वो साहबे निसाब हो जाये बेहतर नहीं है, अलबत्ता अगर वो क़र्ज़दार हो और कर्ज़ की अदायगी के लिये बड़ी रक़म दी तो हर्ज नहीं।

कर्ज़दार व्यक्ति को कर्ज़ से बरी करने से ज़कात अदा न होगी, अलबत्ता यदि फ़क़ीर मक़रूज़ को ज़कात की रक़म दी, फिर उससे अपना क़र्ज़ वसूल कर लिया तो यह ठीक है।

रहमत व शफ़क़त

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

"हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़ि0 से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल स0अ0 ने इरशाद फ़रमायाः रहम करने वालों पर रहमान (अल्लाह तआला) रहम फ़रमाता है, तुम ज़मीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा।" (सुनन तिरमिज़ीः 2049)

फ़ायदाः रहमत व शफ़क़त दीने इस्लाम का ख़ास मिज़ाज है। उसकी तालीमात हमदर्दी, नर्मी, उख़्वत और अमन पसंदी पर मबनी है। जिनके ज़रिये इन्सान हफ़्ते इक़्लीम का बादशाह बन सकता है और मुश्किल से मुश्किल उक़्दों को आसानी से हल कर सकत है। अल्लाह तआला ने यह जज़्बा हर इन्सान की तबियत में वदीयत फ़रमाया है ताकि इन्सान हमदर्दी की राह पर चल सके और खून ख़राबे से बचा रहे। कुरआन मजीद में आपसी रहम व मेहरबानी और नर्म दि ली केजज़्बे को ईमानवालों की सिफ़त बताया गया है और हदीस शरीफ़ में उसी जज़्बा–ए–रहम को आम तौर पर यूं बयान किया गया है कि तमाम मख़्लूक़ अल्लाह का कुन्बा है और अल्लाह तआला को अपनी मख़्लूक़ में वह शख़्स बहुत पसंद है जो उसकी मख़्लूक़ में दूसरों के साथ अच्छा सुलूक करता हो और उनकी ज़रूरतों का ख़्याल रखता हो। एक हदीस में यह भी आया है कि जो शख़्स हममें से छोटों पर शफ़क़त न करे और जो शख़्स बड़ों की इज़्ज़त न करे उसका हमसे कोई ताल्लुक़ नहीं। ख़ुद नबी करीम स0अ0 ने अपने बारे में इरशाद फ़रमाया कि मुझे कमज़ोरो में तलाश किया करो। जिससे मालूम होता है कि आपका हमदर्दी और रहमत व शफ़क़त का जज़्बा किस हद तक बढ़ा हुआ था। दीने इस्लाम में यही ग़ैर मामूली जज़्बा रहमत व शफ़क़त हर ईमानवाले से मतलूब है। ताकि एक नेक इन्सानी समाज वजूद में आए। इसीलिए आप स0अ0 का फ़रमान है जिसको नर्मी का कुछ हिस्सा भी मिल गया उसको दुनिया व आख़िरत की भलाई का हिस्सा नसीब हो गया।

वाक़्या यह है कि अगर इन्सानी ज़मीन हमदर्दी व रहमत व शफ़क़त के जज़्बे से भरा हुआ तो बन्दों के हक़ की अदायगी बहुत आसानी से हो जाती है और इन्सान के लिये मन पर भारी पड़ने वाला हर मुश्किल काम भी आसान हो जाता है। दीने इस्लाम जो कि आलमी दीन और आलमी नबी के ज़रिये हासिल होने वाला एक मज़हब है उसकी एक बुनियादी ख़ासियत यह भी है कि उसने रहमत व शफ़क़त के जज़्बे को भी आलमी क़रार दिया है और उसको किसी ख़ास देश क़ौम व बिरादरी तक सीमित नहीं रखा बल्कि आम तौर पर बिला किसी अन्तर के कहा गया कि तुम ज़मीन वालों पर रहम करो, आसमान वाला तुम पर रहम करेगा और इस रहम के जज़्बे को यही पर सीमित नहीं किया गया बल्कि उसमें जानवरों के भी अधिकार बताए गये। रसूलुल्लाह स0अ0 का इरशाद है कि हर जानदार को आराम पहुंचाना सवाब का काम है। रहमत व शफ़क़त का दायरा यहीं पर समाप्त नहीं हो जाता बल्कि ज़मीन के बारे में कहा गया कि उस पर अकड़ कर मत चलो और हरे पेड़ों के बारे में कहा गया उनको हरगिज़ न काटो। इन मुबारक इरशादों की रौशनी में अगर हमारे अन्दर बेलौस रहमत व शफ़क़त का जज़्बा पैदा हो जाए तो निसंदेह यह दुनिया अमन व शांति का केन्द्र बन जाए और सभी इन्सानों दो दिल एक जान की सूरत नज़र आऐ। जिसके बारे में हदीस में आता है कि ईमानवालों की आपसी मुहब्बत, हमदर्दी व भाईचारे की मिसाल एक जिस्म की तरह है। अगर जिस्म के किसी भी हिस्से को तकलीफ़ होती है तो तकलीफ़ की वजह से रात भर पूरा जिस्म बेचैन रहता है।

इक्कीसवीं सदी के हालात का जायज़ा हमें बतलाता है कि इस दौर में खूंरेज़ी, मानवाधिकारों का हनन, स्वार्थ, लोभ व हिंसा व अत्याचार की अधिकता है और हर इन्सान स्वार्थी हो चुका है जिसकी बुनियादी वजह रसूलुल्लाह स0अ0 की रहमत वाली तालीमात से दूरी और मन की इच्छा पूर्ति है। इस्लाम जिसकी बुनियादी ख़ासियत अमन पसंदी और जज़्बा–ए–रहमत व शफ़क़त है। आज उसी के मानने वाले इस राह से दूर हैं और उनके अमली किरदार से साबित होता है कि वह कठोर दिल के हैं तथा कठोर स्वभाव के हैं। न छोटों पर रहम है न बड़ों का आदर है, न पड़ोसी की चिन्ता है, न गरीब की मदद है और न ही माता–पिता, रिश्तेदारों के हक़ को अदा करने का कोई लिहाज़ है। बस भौतिकता व स्वार्थ का एक तूफ़ान है जिसमें हर व्यक्ति बहा जा रहा है।

ज़बान की नेकियां

बिना सोचे समझे कोई बात नहीं कहनी चाहिये

हुज़ूर स०अ० की बातों से मालूम होता है कि ज़बान मानव अंगों में बड़ी ताक़त व प्रभाव रखती है और इसकी ज़रा सी लापरवाही से दुनिया व आख़िरत में बड़ा वबाल होता है। इसी लिये इसकी हिफ़ाज़त बहुत ज़रूरी है। अल्लाह तआला ने इसकी हिफ़ाज़त का हुक्म दिया है और इसकी निगेहबानी करने वाला तय किया है कि एक–एक शब्द सुरक्षित हो जाये।

अल्लाह का इरशाद है: "इन्सान ज़बान से कोई बात नहीं निकालता मगर उसके लिये एक निगरां तैयार है।" (सूरह क़ाफ़)

हमारे लिये ज़रूरी है कि हम जो बात ज़बान से निकालें ख़ूब सोच–समझ कर निकालें। बात कहें तो सच्ची और अच्छी कहें वरना ख़ामोश रहना बेहतर है।

हुज़ूर अक़दस स०अ० ने फ़रमाया: "जो अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखता है उसको चाहिये कि बात कहे तो बेहतर कहे वरना ख़ामोश रहे।" (बुख़ारी व मुस्लिम)

हमारा एक बड़ा फ़र्ज़ ये है कि बहुत से बातें हम बे सोचे समझे कह जाते हैं और इसका एहसास नहीं होता कि ये बात हमको कहां ले जा रही है और इसका क्या परिणाम आयेगा। कई बार एक छोटी सी बात कहने वाले को जन्नत पहुंचा देती है और कई बार जहन्नम का रास्ता दिखा देती है और कहने वाले को अपने अन्जाम की ख़बर तक नहीं होती।

हुज़ूर स०अ० का पाक इरशाद है: "बन्दा कई बार ऐसी बात बोल जाता है जिससे अल्लाह की रज़ा हासिल हो जाती है मगर उसकी अहमियत नहीं मालूम होती। इस बात के ज़रिये अल्लाह तआला उसके दर्जों को बुलन्द कर देता है और कोई बन्दा ऐसी बात कह बैठताा है कि जिसके कहने से अल्लाह तआला का ग़ुस्सा नाज़िल होता है और उसको कुछ ख़बर नहीं होती कि इसके कारण वो आग में जा रहा होता है।" (बुख़ारी)

जब एक बात इन्सान को कहीं से कहीं पहुंचा देती है तो जिन लोगों को बहुत ज़्यादा बोलने की बीमारी है उनका क्या हाल होता होगा। इसलिये ज़्यादा बातचीत करने से बचना सबसे ज़्यादा ज़रूरी है। बेकार की बातें बड़े फ़ितनों और फ़सादों का दरवाज़ा खोलती है और इसका ख़मियाज़ा कई बार दुनिया में भुगतना पड़ता है और आख़िरत में तो लाज़िमी भुगतना होगा।

"तुम अल्लाह के ज़िक्र के अलावा ज़्यादा बात न किया करो, ज़्यादा बोलना दिल को सख़्त कर देता है और सख़्त दिल आदमी अल्लाह तआला से बहुत दूर है।" (तिरमिज़ी)

अल्लाह तआला ने इस ज़बान में बहुत सी ख़ूबियां रखीं हैं और बहुत से ऐब। हर ख़ूबी व ऐब की निशानदेही कुरआन शरीफ़ और हदीस पाक में की गयी है और इस सिलसिले में बहुत सी हिदायतें दी गयी हैं।

अल्लाह तआला लिखने वाले और पढ़ने वाले को अपनी मर्ज़ी पर चलाये और ज़बान की हिफ़ाज़त करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन!

मौलाना मुहम्मद सानी हसनी रह०

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Postal Reg. No.
RBL/NP -19

Issue: 12 DECEMBER 2018 VOLUME: 10

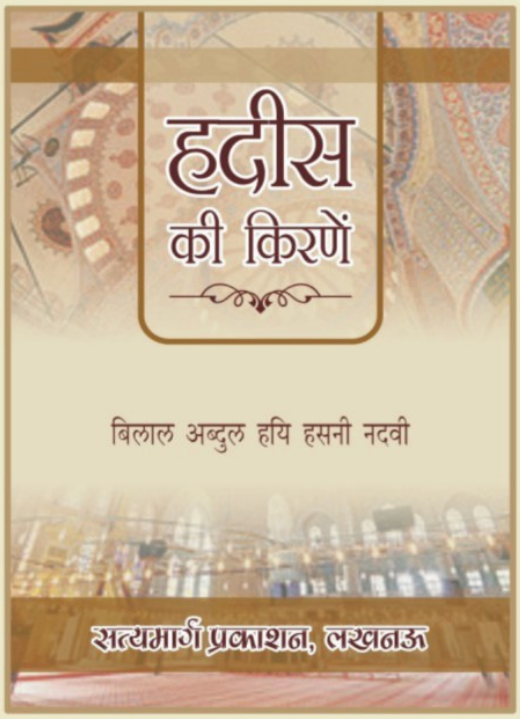

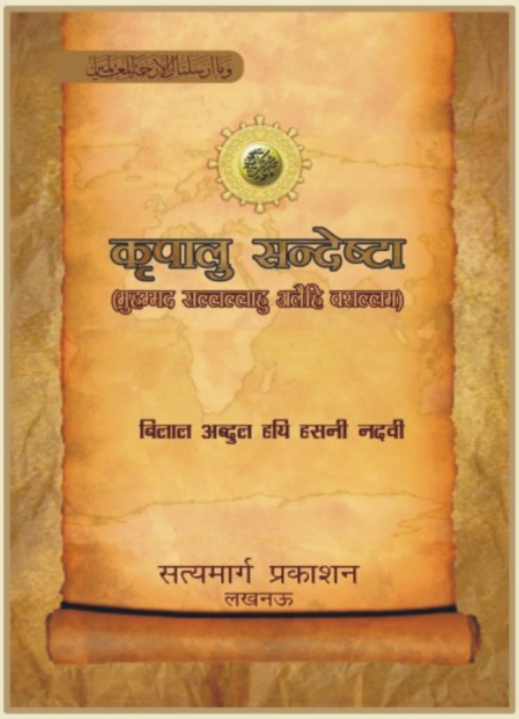

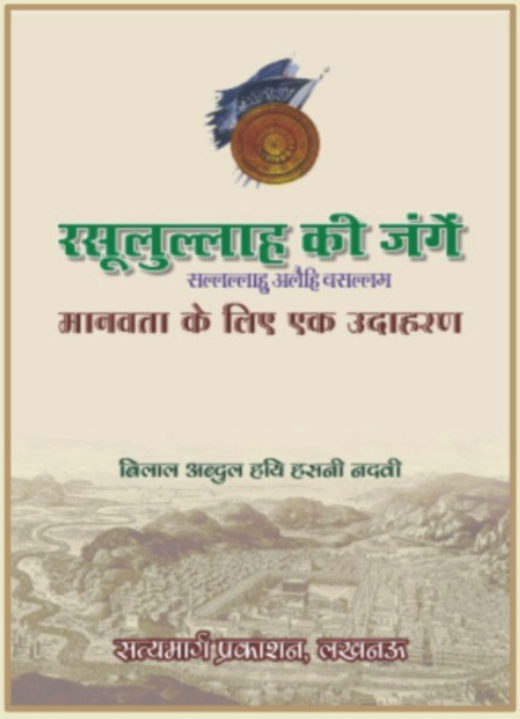

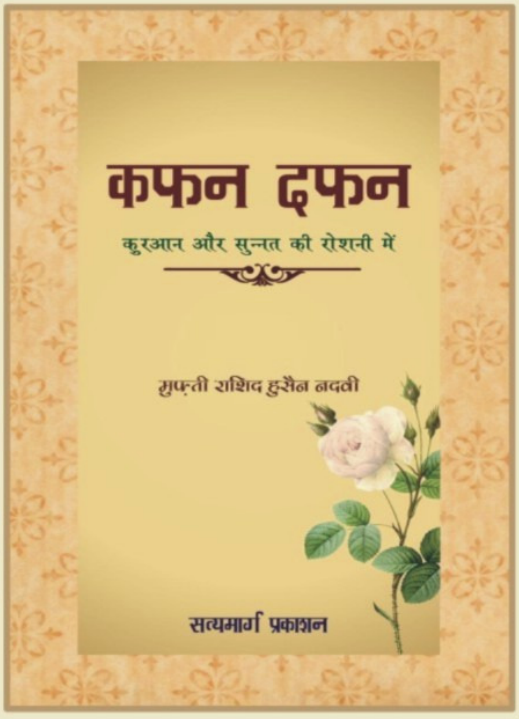

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak
Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.